विस्स-पुज्जो दियंबरो

(विश्वपूज्य दिगंबर)

आचार्य वसुनन्दी मुनि

ग्रंथ	:	विस्स पुज्जो दियंबरो (विश्वपूज्य दिगंबर)
मंगल आशीर्वाद	:	परम पूज्य श्वेतपिच्छाचार्य श्री 108 विद्यानन्द जी मुनिराज
ग्रंथकार	:	अभीक्षण ज्ञानोपयोगी आचार्य श्री 108 वसुनन्दी जी मुनिराज
संपादन	:	आर्यिका वर्धस्वनंदनी
प्राप्ति स्थान	:	• श्री जम्बूस्वामी तपोस्थली, बोलखेड़ा (कामां) राजस्थान
संस्करण	:	द्वितीय 1000 (सन् 2021)
प्रकाशक	:	निर्ग्रंथ ग्रंथमाला समिति (पंजी.)
मुद्रक	:	पारस प्रकाशन, दिल्ली मो.: 9811374961, 9818394651, 9811363613 pkjainparas@gmail.com, kavijain1982@gmail.com

संपादकीय

ज्ञानाद्धितं वेत्ति ततः प्रवृत्तिं, रत्नत्रये संचित कर्म मोक्षः।
ततस्ततः सौख्यमबाध मुच्चैस्तेनात्रयत्नं विदधाति दक्षः॥

मनुष्य ज्ञान से हित को जानता है, हित का ज्ञान होने से रत्नत्रय में प्रवृत्ति करता है, रत्नत्रय में प्रवृत्ति करने से संचित कर्मों से मोक्ष होता है और संचित कर्मों के मोक्ष से निर्बाध उत्तम सुख की प्राप्ति होती है, इसलिये चतुर मनुष्य ज्ञान में प्रयत्न करते हैं।

भव्य-नराः ज्ञानरथाधिरूढाः, व्रजन्ति शीघ्रं शिवपत्तनञ्च।
अज्ञानिनो मौढ्यरथाधिरूढाः, व्रजन्ति श्वभ्राभिधपत्तनं वै॥

ज्ञान रूपी रथ पर सवार हुए भव्य जीव शीघ्र मोक्षरूपी नगर को प्राप्त होते हैं और मूर्खतारूपी रथ पर सवार हुए अज्ञानी जीव निश्चय से नरकरूपी नगर को प्राप्त होते हैं।

चेतना के क्षितिज पर उदीयमान सम्यग्ज्ञान का आदित्य अज्ञान रूपी तम को तिरोहित कर वस्तु का सम्यक् अवबोध कराने में समर्थ होता है और सम्यग्ज्ञान का यह मिहिर श्रुताभ्यास स्वाध्याय से तेजस्विता को प्राप्त होता है। "सम्यग्ज्ञान का वह सूर्य कषायों का अवशोषण, भोग रूपी कीटाणुओं का नाश, सम्यगावबोध का प्रकाश फैलाता है।" स्वाध्याय में निरत व्यक्ति के लिये मोक्ष रूपी दुर्ग तक पहुँचने में बाधक संसार का यह दुर्गम व दुर्लंघ्य सा प्रतीत होने वाला गिरी राईवत् हो जाता है जिससे मोक्ष यात्रा सरल व सुगम हो जाती है।

अतः भव्य जीवों के हितार्थ आचार्य श्री ने मूलभाषा प्राकृत में ग्रंथों का लेखन किया, जिससे भाषा को जीवंतता भी प्राप्त हो और सद्साहित्य के आलोक से संपूर्ण विश्व प्रकाशित हो सके।

आज का मानव नितान्त भौतिक और सुख सुविधा सम्पन्न वातानुकूलित, विविध वैचित्र्य पूर्ण तथ्यों की छाया में पल रहा है। ऐसे में जिन्होंने सर्व सावद्य से विरक्ति ली है, सर्व आरंभ-परिग्रहादि का त्याग किया है, जो परहित निरत, सर्वस्व त्यागी, परम विरागी, मोहममताजयी, कामविजयी, तपत्याग संयमादर्श, महाव्रत-धारक और दिगम्बर हैं, उन्हें 'धन्य' शब्द के अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है। जिनका तरुतलवास, करतलभोज, नंगे पैर संपूर्ण पृथ्वी पर गमन है, दिशायें ही जिनकी अंबर हैं वे दिगम्बर संत विश्व पूज्य हैं। साधुओं की चर्या क्या, क्यों, कैसे इत्यादि का वर्णन ग्रंथ में भव्यों के बोधार्थ सरलतम, सुगम शैली में किया गया है। भदंत, संत, महंत, दांत, वातरसनाजयी, यति, संन्यासी, हृषीकेश, दमी, श्रमण, अनगार, स्नातक नामों से पूजनीय संतों के स्वरूप का वर्णन भी आचार्य महाराज ने किया है। यथा-

ठवदि सदं णिय-चित्ते, चिंतदि झायदि बोल्लदि जो णिच्चं।
सण्णाणिं संलीणं, तं सण्णासिं णमामि सया॥113॥

जो नित्य निज चित्त में सत् की स्थापना करता है, सत् का चिंतन करता है, ध्यान करता है, बोलता है उन सत् ज्ञानी लीन व संन्यासी को सदा नमस्कार करता हूँ।

ये दिगम्बर साधु लोक का पालन करने वाले होने से लोकपाल भी कहे जाते हैं। शतइन्द्र जिनके चरणों में प्रणाम करते हैं तो नि:संदेह तीनों लोकों के द्वारा पूज्य हैं। देव-शास्त्र-गुरु पर श्रद्धान सम्यक्त्व है, एक के भी श्रद्धान में कमी होने से सम्यक् भी नहीं होता अत: मोक्ष रूपी दुर्ग की नींव को दृढ़ करने हेतु लोक पूजित मुनि के माहात्म्य को दर्शाते हुये यह ग्रंथ 165 गाथाओं में लिखा गया है।

यदि इस ग्रंथ के संपादन में कोई त्रुटि रह गई हो तो विज्ञजन

संशोधित कर पढ़ें, हंसवत् गुणग्राही दृष्टि से ग्रंथाध्ययन करें। जन-जन के श्रद्धापुंज परम पूज्य अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्य गुरुवर श्री वसुनंदी जी मुनिराज का संयम, तप, ज्ञान, साधना का सौरभ सहस्रों वर्षों तक संपूर्ण विश्व को सुरभित करता रहे। गुरुवर श्री को आरोग्य लाभ हो एवं अपने लक्ष्य को शीघ्र प्राप्त करें। परम पूज्य गुरुवर श्री के चरणों में सिद्ध-श्रुत-आचार्य भक्ति सहित कोटिशः नमोस्तु! नमोस्तु! नमोस्तु!.....।।

''जैनम् जयतु शासनम्''

श्री शुभमिति माघ शुक्ल दशमी
श्री वीर निर्वाण संवत् 2547
सोमवार 22.2.2021
श्री जम्बूस्वामी तपोस्थली-बौलखेड़ा,
कामां, भरतपुर (राज.)

आर्यिका वर्धस्वनंदनी

अनुक्रमणिका

मंगलाचरण 13
द्विविध मनुष्य 14
धर्म सेवन 14
पुण्यं कुरु 15
कल्याण हेतु आवश्यक तत्त्व 15
मोहाविष्ट 15
तत्त्व-अज्ञानी 16
अत्यंताभाव 16
मोह माहात्म्य 16
तीव्र मोह व कषाय का प्रभाव 17
कषाय मंदता 17
पुरुषार्थ व सहज साध्य 17
पुण्यात्मा कौन? 18
शुभ निमित्त 18
सम्यग्ज्ञानी 18
परवस्तु त्यागी कौन? 19
क्रमिक त्याग 19
व्यसन त्याग 19
व्रत धारण 20
अणुव्रत-महाव्रत 20
धरती के देव 21
धर्म का मूल 21
दया धर्म 22
क्रमिक व्रत-तप 22
व्रतधारी के ध्यानादि संभव 22
भोजन शुद्धि आवश्यक 23
अभक्ष्य त्याग 23
पर दुःख भी निज दुःख सम 24
दुःख अनाकांक्षी 24
विरक्त कौन? 24
परिग्रह त्याग 25
संगासक्त के ध्यान नहीं 25
उत्कृष्ट साधु 25
अविकारी दिगंबर संत 26
बालक सम निश्छल 26
सर्वहिताय 26
दिगंबरत्व कैसा? 27
दिगंबर व नग्न मे अंतर 27
विकार त्याग आवश्यक 27
परिग्रह से हानि 28
योगी 29
पापी कौन? 29
भगवान् रूप 29
आवरण युक्त, विकार त्याग असंभव 30
आरंभी, योगी नहीं 30
मुनि 30
योगी की शुद्धता 31
केशलोंच क्यों? 31

आहार क्यों व कैसे? 31
यावज्जीवन खड़े होकर आहार
की प्रतिज्ञा 32
सर्व परिग्रहत्यागी 32
शयन 32
परगृह निवास 33
मुनियों की विशेषता 33
इंद्रिय जयी 34
प्रकृति युक्त मुनि 34
धरती पर वरदान-दिगंबर मुनि 35
रोगहारक 35
तप से ऋद्धि 35
नि:स्वार्थ बंधु 36
सुभिक्षता 36
निवास स्थान 37
वन निवास निषेध 37
उपकरणादि दान 37
त्रियोग शुद्धि हेतु उपकरण 38
मुनि वंदना 38
मुनि क्रिया 39
साधु द्वारा अकरणीय 39
विहार काल 40
मुनि वचन 40
आहार विधि 40
आदान निक्षेपण समिति 41
उत्सर्ग समिति 41
गमन विधि 41
आरंभ त्यागी 42
संयमार्थ केशलोंचन 42
अयाचक 42
भोगी-योगी 43
सतत् विहारी 43
शीलपालन 44
अतिदुर्लभ 44
निर्वाण साधक 45
जिनकल्पी 45
विकृति से प्रकृति नहीं 45
दिगंबर रूप ही क्यों? 46
कमंडलु 46
पिच्छी क्या व क्यों? 46
अशुद्ध औषधि भी नहीं 47
सहिष्णु 48
आत्मानंद भोगी 48
संयमी 48
ऋषि 49
यति 49
संन्यासी 49
लोकपूज्य 50
अनगार 50
श्रमण 50
निर्ग्रन्थ 51
स्नातक 51
धर्ममूर्ति 51
दिग्वासा 52
हृषीकेश 52
दमी 52
भदंत 53
वातरशना 53
दांत 53
मुंडक 54
महात्मा 54
अचेलक 54
महंत 55
साधक 55

जिन 55
संत 56
जितेन्द्रिय 56
क्षपक 56
उपशामक 57
आचेलक्य का हेतु 57
दिगंबर प्रकृति 57
सहज प्राकृतिक दिगंबर रूप 58
सदा अभूतपूर्व 58
नव-नव उत्साह 58
भवकारण 59
ममत्व निवारक 59
पद विहार 59
व्यायाम 60
पद विहार के वैज्ञानिक कारण 60
पदविहार क्यों? 60
स्थित प्रज्ञ 61
सुख-आनंद-समृद्धि 61
दुःखाभाव 61
प्राकृतिक प्रकोप भी नहीं 62
सुविधा-दुविधा कारक 62
परिग्रह से अशांति 62
अनंत दुःखी कौन? 63
सम्यक् शास्त्र 63
आत्मा का भोजन 63
सम्यग्ज्ञान का कारण 64
साधु बिना धर्म नहीं 64
ग्रंथकार की लघुता 64
अंतिम मंगलाचरण 65
प्रशस्ति 66

विस्स-पुज्जो दियंबरो

(विश्वपूज्य दिगंबर)

सर्व पाप-आरंभ त्यागी, सूक्ष्म जंतुओं की भी विराधना से रहित, सर्वभौतिक संसाधनों से विरक्त, तप-त्याग-संयमादर्श, करतल भोजी, तरुतलवासी, आजीवन पदविहारी, असीम दयावान, वस्त्रादि परिग्रह से रहित दिगम्बर मुनि विश्व में पूजनीय हैं। यह ग्रंथ उनके मार्ग तक पहुँचने का कथंचित् विधान तथा स्वरूप, चर्या व पूज्यता आदि का वर्णन करने वाला है।

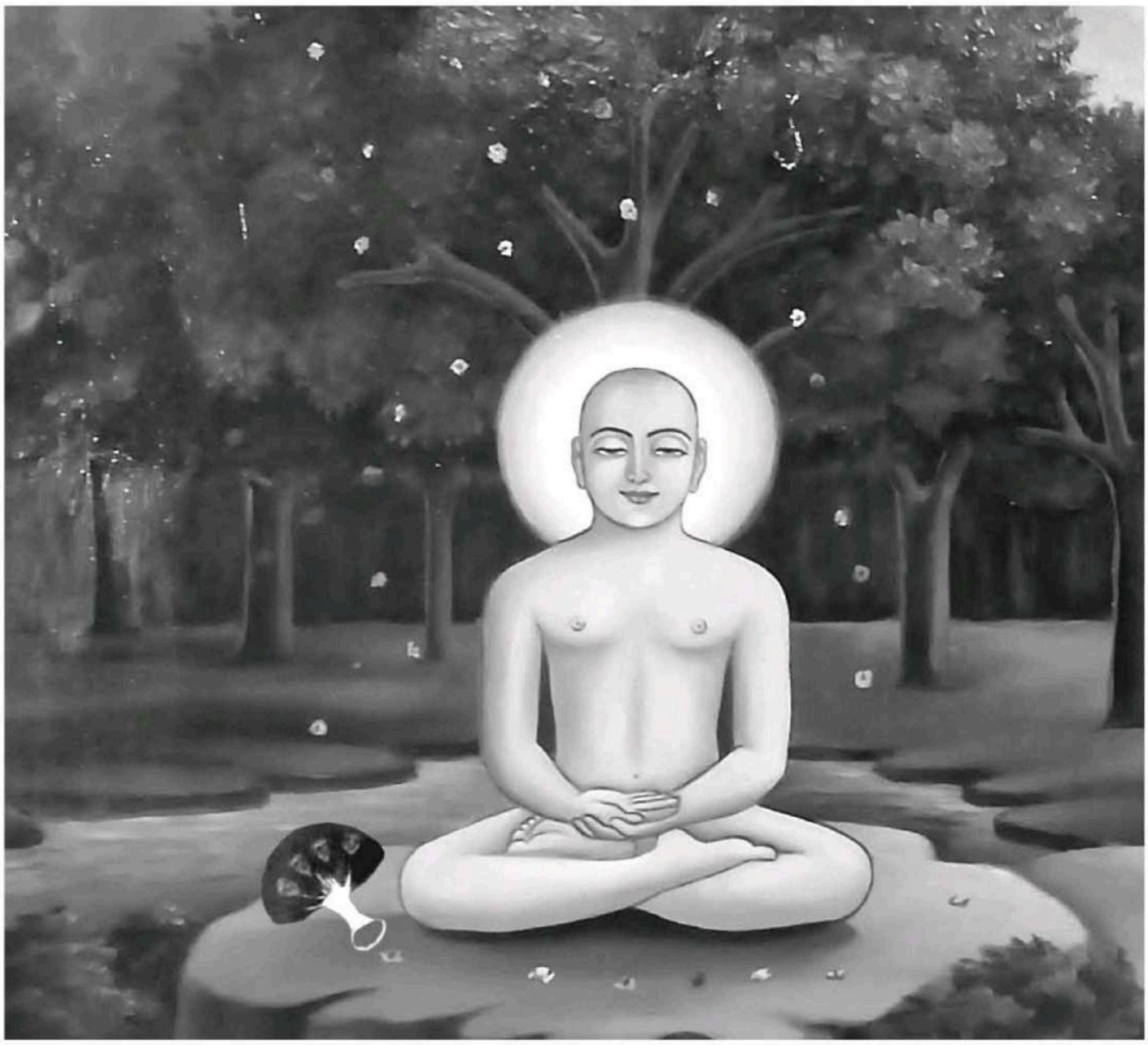

विस्स-पुज्जो दियंबरो
(विश्वपूज्य दिगंबर)

मंगलाचरण

णमो सव्व-सिद्धाणं, विमलाणं णाण-दंसण-जुदाणं।
सव्व-कम्म-हीणाणं, लोयग्गे ठिदाण सुद्धाण।।1।।

अन्वयार्थ—विमलाणं-विमल **णाण-दंसण-जुदाणं**-ज्ञान-दर्शन से युक्त **सव्व-कम्म-हीणाणं**-सभी कर्मों से हीन **सुद्धाण**-शुद्ध **लोयग्गे**-लोक के अग्र भाग में **ठिदाण**-स्थित **सव्व-सिद्धाणं**-सभी सिद्धों को **णमो**-नमस्कार हो।

धम्म-तित्थ-पवट्टगा, धम्म-मग्गस्स पयासगा णिच्चं।
सेययरा भव्वाणं, जिणिंदा णमामि तिजोगेण।।2।।

अन्वयार्थ—धम्म-तित्थ-पवट्टगा-धर्म तीर्थ के प्रवर्तक **धम्म-मग्गस्स**-धर्म मार्ग के **पयासगा**-प्रकाशक **भव्वाणं**-भव्यों के लिए **सेययरा**-श्रेयस्कर **जिणिंदा**-जिनेन्द्रों को **णिच्चं**-नित्य **तिजोगेण**-त्रियोग से **णमामि**-नमस्कार करता हूँ।

विसय-कसाय-विहीणा, सम्मत्ताइ-अप्प-गुण-संजुत्ता।
सगवरहिदम्मि णिरदा, सव्वदा थवेमि णिग्गंथा।।3।।

अन्वयार्थ—विसय-कसाय-विहीणा-विषय-कषाय से विहीन **सम्मत्ताइ-अप्प-गुण-संजुत्ता**-सम्यक्त्वादि आत्म गुणों से संयुक्त **सगवर-हिदम्मि**-स्व-पर हित में **णिरदा**-निरत **सव्वदा**-सर्वदा **णिग्गंथा**-निर्ग्रंथों की **थवेमि**-स्तुति करता हूँ।

भवसायर-तारगं हु, सुक्ख-समिद्धि-संतीण कारणं च।
हिदंकरं जीवाणं, सच्चधम्मं णमामि णिच्चं।।4।।

अन्वयार्थ—हु-निश्चय से **भव-सायर-तारगं**-भव सागर से पार करने वाले **सुक्ख-समिद्धि-संतीण च**-सौख्य, समृद्धि और शांति के **कारणं**-कारण **जीवाणं**-जीवों के **हिदंकरं**-हितंकर **सच्चधम्मं**-सत्य धर्म को **णिच्चं**-नित्य **णमामि**-नमस्कार करता हूँ।

द्विविध मनुष्य

दुविहा पस्संति णरा, सव्वदा इमाइ कम्म-भूमीए।
अह-जुदा पुण्णहीणा, विदिया तह होंति विवरीया।।5।।

अन्वयार्थ—इमाइ-इस **कम्म-भूमीए**-कर्म भूमि में **सव्वदा**-सर्वदा **दुविहा**-दो प्रकार के **णरा**-मनुष्य **पस्संति**-दिखाई देते हैं (प्रथम) **अह-जुदा**-पापों से युक्त व **पुण्णहीणा**-पुण्य से हीन **तह**-तथा **विदिया**-दूसरे **विवरीया**-इससे विपरीत **होंति**-होते हैं।

धर्म सेवन

कंखंति सव्व-जीवा, सव्वदा य सस्सदं सुहं संतिं।
विणा धम्मं लहणं ण, संभवो तं सेवदु धम्मं।।6।।

अन्वयार्थ—सव्व-जीवा-सभी जीव **सव्वदा**-सर्वदा **सस्सदं**-शाश्वत **सुहं**-सुख **य**-और **संतिं**-शांति की **कंखंति**-आकांक्षा करते हैं **धम्मं विणा**-धर्म के बिना (उन्हें) **लहणं**-प्राप्त करना **संभवो**-संभव **ण**-नहीं है **तं**-इसीलिए (सदा) **धम्मं**-धर्म का **सेवदु**-सेवन करना चाहिए।

पुण्यं कुरु

भोदिग-सुहं मण्णदे, सया देह-सुहस्स कारणं किंचि।
विणा पुण्णं उवकसदि, ण तं पुण्णं करेज्ज तम्हा।।7।।

अन्वयार्थ—भोदिग-सुहं-भौतिक सुख **देह-सुहस्स**-देह सुख का **किंचि** -किंचित **कारणं**-कारण **मण्णदे**-माना जाता है **पुण्णं**-पुण्य के **विणा**-बिना **तं**-वह सुख **ण उवकसदि**-प्राप्त नहीं होता **तम्हा**-इसीलिए **सया**-सदा **पुण्णं**-पुण्य **करेज्ज**-करना चाहिए।

कल्याण हेतु आवश्यक तत्त्व

को वि कल्लाण-करिदुं, तह ण सक्को विणा णिम्ममदाए।
बीअं विणा जह तरू, अक्कपयासो विणा अक्कं।।8।।

अन्वयार्थ—णिम्ममदाए-निर्ममता वा निर्मोहता के **विणा**-बिना **को वि**-कोई भी **कल्लाण-करिदुं**-कल्याण करने में **तह**-उस प्रकार **ण सक्को**-समर्थ नहीं है **जहा**-जिस प्रकार **बीअं**-बीज के **विणा**-बिना **तरू**-वृक्ष और **अक्कं**-सूर्य के **विणा**-बिना **अक्कपयासो** सूर्य का प्रकाश नहीं होता।

मोहाविष्ट

मोहाविट्ठो जीवो, मज्जावीओव्व मण्णदे णिच्चं।
सवर-कल्लाण-करिदुं, सो कहं सक्केज्ज लोयम्मि।।9।।

अन्वयार्थ—मोहाविट्ठो-मोह से आवृत **जीवो**-जीव **णिच्चं**-नित्य **मज्जावीओव्व**-मद्यपायी के समान **मण्णदे**-माना जाता है **सो**-वह **लोयम्मि**-लोक में **सवर-कल्लाण-करिदुं**-स्वपर कल्याण करने के लिए **कहं**-किस प्रकार **सक्केज्ज**-समर्थ हो सकता है।

तत्त्व-अज्ञानी

परवत्थूणि मण्णदे, अप्पुल्लो सगभावो परभावं।
जो सो तच्चण्णाणी, कल्लाण-करिदुं ण समत्थो।।10।।

अन्वयार्थ—जो-जो **परवत्थूणि**-परवस्तुओं को **अप्पुल्लो**-अपना **मण्णदे**-मानता है (और) **परभावं**-पर भाव को **सगभावो**-स्व भाव मानता है **सो**-वह **तच्चण्णाणी**-तत्त्व-अज्ञानी **कल्लाण-करिदुं**-अपना कल्याण करने में **समत्थो**-समर्थ **ण**-नहीं है।

अत्यंताभाव

जीवो ण होदि कया वि, पोग्गलाइ-अण्णदव्वरूवो खलु।
पोग्गलादी तहेव वि, जीवरूवा णो होंति कया।।11।।

अन्वयार्थ—जीवो-जीव **खलु**-निश्चय से **कया वि**-कभी भी **पोग्गलाइ-अण्णदव्वरूवो**-पुद्गल आदि अन्य द्रव्य रूप **ण**-नहीं **होदि**-होता **तहेव**-उसी प्रकार **पोग्गलादी**-पुद्गल आदि **वि**-भी **कया**-कभी **जीवरूवा**-जीव रूप **णो**-नहीं **होंति**-होते।

मोह माहात्म्य

परवत्थुमप्परूवमणुभवदि सुहं भासदि परवत्थुम्मि।
सगसरूवं ण जाणदि, मोहस्स महप्पुरो णेयो।।12।।

अन्वयार्थ—जीव **परवत्थुं**-परवस्तु को **अप्परूवं**-आत्म रूप **अणुभवदि**-अनुभव करता है उसे **परवत्थुम्मि**-परवस्तु में **सुहं**-सुख **भासदि**-भासता है (वह) **सगसरूवं**-निज स्वरूप को **ण जाणदि**-नहीं जानता ऐसा **मोहस्स**-मोह का **महप्पुरो**-माहात्म्य **णेयो**-जानना चाहिए।

तीव्र मोह व कषाय का प्रभाव

जदि होज्ज मोह-तिव्वो, तदा कया कसाय-तिव्वोदयो वि।
तिव्व-कसाय-जुत्तो य, जीवो हु उम्मत्त-मूढोव्व।।13।।

अन्वयार्थ—जदि-यदि **मोहो**-मोह **तिव्वो**-तीव्र **होज्ज**-होता है **तदा**-तब **कया**-कभी **कसाय-तिव्वोदयो**-कषाय का तीव्र उदय **वि**-भी (होता है) **य**-और **तिव्व-कसाय-जुत्तो**-तीव्र कषाय से युक्त **जीवो**-जीव **हु**-निश्चय से **उम्मत्त-मूढोव्व**-उन्मत्त, मूर्ख के समान होता है।

कषाय मंदता

होज्ज संति-परिणामा, जीवस्स मिच्छत्त-कसाय-मंदो।
लहिदूणं हु कालाइ-लद्धिं होदि सग-हिद-जोग्गो।।14।।

अन्वयार्थ—जब **जीवस्स**-जीव का **मिच्छत्त-कसाय-मंदो**-मिथ्यात्व व कषाय मंद **होज्ज**-होता है (तब उसके) **संति-परिणामा**-शांति रूप परिणाम होते हैं **हु**-निश्चय से **कालाइ-लद्धिं**-काल आदि लब्धि को **लहिदूणं**-प्राप्त कर **सग-हिद-जोग्गो**-स्व हित के योग्य **होदि**-होता है।

पुरुषार्थ व सहज साध्य

पुरिसत्थ-सज्झं हु अवि, सम्मदंसणं तहा सहज-सज्झं।
उहय-लद्धि-संजुत्तो, करिदुं सगप्प-हिदं सक्को।।15।।

अन्वयार्थ—हु-निश्चय से **सम्मदंसणं**-सम्यग्दर्शन **पुरिसत्थ-सज्झं**-पुरुषार्थ साध्य **अवि**-भी है **तहा**-तथा **सहज-सज्झं**-सहज साध्य भी है **उहय-लद्धि-संजुत्तो**-उभय लब्धि से संयुक्त **सगप्प-हिदं**-अपनी आत्मा का हित **करिदुं**-करने में **सक्को**-समर्थ है।

पुण्यात्मा कौन ?

सहजदाए मिच्छत्त-समणं पुरिसत्थेण य कसायस्स।
जिण-णिग्गंथ-आगमं, जइ लहदि मण्णे पुण्णप्पा।।16।।

अन्वयार्थ—मिच्छत्त-समणं-मिथ्यात्व का शमन **सहजदाए**-सहजता से **य**-और **कसायस्स**-कषाय का शमन **पुरिसत्थेण**-पुरुषार्थ से होता है **जइ**-यदि (जीव) **जिण-णिग्गंथ-आगमं**-जिनेन्द्र देव, निर्ग्रंथ मुनि व आगम को **लहदि**-प्राप्त करता है (तो वह) **पुण्णप्पा**-पुण्यात्मा **मण्णे**-माना जाता है।

शुभ निमित्त

जिण-सुत्त-मुणिं विणा ण, समत्थो सम्मत्ताइ-गुण-लहिदुं।
होदि ण सुह-णिमित्तं वि, मंगल-करिदु-मइपावुदये।।17।।

अन्वयार्थ—जिण-सुत्त-मुणिं विणा-जिनेन्द्र प्रभु, जिनसूत्र, मुनि के बिना जीव **सम्मत्ताइ-गुण-लहिदुं**-सम्यक्त्व आदि गुणों को प्राप्त करने में **समत्थो**-समर्थ **ण**-नहीं है **अइ-पावुदये**-अति पाप के उदय में **सुह-णिमित्तं**-शुभ निमित्त **वि**-भी **मंगल-करिदुं**-कल्याण करने में **ण**-समर्थ नहीं **होदि**-होता।

सम्यग्ज्ञानी

जदा देह-जीवाणं, भिण्णं भिण्णं होज्जा खलु णाणं।
तदा सम्मत्ताइ-गुण-लहिदूणं होदि सण्णाणी।।18।।

अन्वयार्थ—जदा-जब **देह-जीवाणं**-देह और जीव अर्थात् आत्मा का **णाणं**-ज्ञान **भिण्णं**-भिन्न **भिण्णं**-भिन्न **होज्जा**-होता है **तदा**-तब **सम्मत्ताइ-गुण-लहिदूणं**-सम्यक्त्व आदि गुणों को प्राप्त कर **खलु**-जीव निश्चय से **सण्णाणी**-सम्यक्ज्ञानी **होदि**-होता है।

परवस्तु त्यागी कौन ?

होदि भेदविण्णाणी, अंतर-णाऊ य देह-जीवाणं।
जो हु तच्चणाणी सो, पर-वत्थुं उज्झिदुं सक्को।।19।।

अन्वयार्थ—जो-जो **भेदविण्णाणी**-भेद-विज्ञानी **देह-जीवाणं**-देह जीव का **अंतर-णाऊ**-अंतर ज्ञाता **य**-और **तच्चणाणी**-तत्त्वज्ञानी **होदि**-होता है **सो**-वह **हु**-निश्चय से **पर-वत्थुं**-पर वस्तु को **उज्झिदुं**-त्याग करने में **सक्को**-समर्थ है।

क्रमिक त्याग

महाणट्ठयारीमो, तं वत्थुमुज्झदि पढमो जं तस्स।
अणंतरमणट्ठयारि-सव्व-पदत्थाइं मुंचेदि।।20।।

अन्वयार्थ—इमो-यह जीव **पढमो**-पहले **तं**-उस **वत्थुं**-वस्तु का **उज्झदि**-त्याग करता है **जं**-जो **तस्स**-उसके लिए **महाणट्ठयारी**-महा अनर्थकारी है **अणंतरं**-इसके अनंतर **अणट्ठयारि-सव्व-पदत्थाइं**-अनर्थकारी सभी पदार्थों का **मुंचेदि**-त्याग कर देता है।

व्यसन त्याग

मंसं मज्जं अंडं, तस-कलेवरं णो भक्खदि कया वि।
वेस्सा-परित्थि-गमणं, ण कुव्वदि परवह-माखेडं।।21।।

अन्वयार्थ—वह **मंसं**-माँस **मज्जं**-मद्य **अंडं**-अंडा **तस-कलेवरं**-त्रसों के कलेवर का **कया वि**-कभी भी **णो भक्खदि**-भक्षण नहीं करता **वेस्सा-परित्थि-गमणं**-वेश्यागमन, पर-स्त्री गमन **परवहं**-परवध **आखेडं**-शिकार **ण**-नहीं **कुव्वदि**-करता।

जूअकेलि मुवहासं, कुणदि ण चोरिं तण्हं पेसुण्णं।
कमसो उज्झदि कामं, कसाय-भाव-मक्ख-भोयं च।।22।।

अन्वयार्थ—वह **जूअकेलिं**-द्यूतक्रीड़ा **उवहासं**-उपहास, **चोरिं**-चोरी **पेसुण्णं**-चुगली **तण्हं**-तृष्णा **ण**-नहीं **कुणदि**-करता पुनः **कमसो**-क्रमशः **कामं**-काम **अक्ख-भोयं**-इंद्रिय भोग **च**-और **कसाय-भावं**-कषाय भाव को **उज्झदि**-छोड़ देता है।

व्रत धारण

अध गहदे अणुव्वदं, सत्तसीलं च एयारस-पडिमा।
कुव्वदि धम्म-कज्जाणि, तच्चचिंतणं तव-संजमं।।23।।

अन्वयार्थ—अध-फिर वह **अणुव्वदं**-अणुव्रत **सत्तसीलं**-सपता शील व्रत **च**-और **एयारस-पडिमा**-ग्यारह प्रतिमाओं को **गहदे**-ग्रहण करता है **धम्म-कज्जाणि**-धर्म कार्यों को **कुव्वदि**-करता है **तच्च-चिंतणं**-तत्त्व चिंतन करता है तथा पुनः **तव-संजमं**-संयम युक्त तप को ग्रहण करता है।

अणुव्रत-महाव्रत

थूल-पाव-आमुयणं, मण्णदे अणुव्वदं जिणसमयम्मि।
सव्व-अघ-परिच्चअणं, महव्वदं महापुरिसाणं।।24।।

अन्वयार्थ—जिणसमयम्मि-जिनशासन में **थूल-पाव-आमुयणं**-स्थूल पापों का त्याग करना **अणुव्वदं**-अणुव्रत **मण्णदे**-माना जाता है तथा **सव्व-अघ-परिच्चअणं**-सभी पापों का त्याग करना **महापुरिसाणं**-महापुरुषों का **महव्वदं**-महाव्रत है।

धरती के देव

जो रयणत्तय-जुत्तो, संजम-साहगो भगवंतो सो।
किंतु-सुद्धप्प-सस्सद-गुण-संजुत्तो हु परमप्पा।।25।।

अन्वयार्थ—जो-जो **रयणत्तय-जुत्तो**-रत्नत्रय से युक्त **संजम-साहगो**-संयम साधक है **सो**-वह **भगवंतो** भगवान् है **किंतु**-किन्तु **सुद्धप्प सस्सद-गुण-संजुत्तो**-शुद्धात्मा के शाश्वत गुणों से संयुक्त **हु**-निश्चय से **परमप्पा**-परमात्मा है।

धर्म का मूल

आयारो वसमूलो, सुद्धि-कारणं भोयणं तह तस्स।
आयारेणं वियार-सुद्धी ताए ववहारस्स।।26।।

वयण-मण-सुद्धी सया, अप्पसुद्धीए कारणं होज्जा।
जस्स भोयणमसुद्धं, किं सुद्धी कहं होज्ज तस्स।।27।।

अन्वयार्थ—आयारो-आचार **वसमूलो**-धर्म का मूल है **तह**-तथा **भोयणं**-भोजन **तस्स**-उसकी **सुद्धि-कारणं**-शुद्धि का कारण है **आयारेणं**-आचरण से **वियार-सुद्धी**-विचारों की शुद्धि व **ताए**-उससे **ववहारस्स**-व्यवहार की शुद्धि होती है। **वयण-मण-सुद्धी**-वचन व मन शुद्धि **सया**-सदा **अप्पसुद्धीए**-आत्मशुद्धि का **कारणं**-कारण **होज्जा**-होती है **जस्स**-जिसका **भोयणं**-भोजन **असुद्धं**-अशुद्ध है **तस्स**-उसकी **किं**-कौन सी **सुद्धी**-शुद्धि **कहं**-किस प्रकार **होज्ज**-हो सकती है।

दया धर्म

हिंसं उज्झेज्ज जीव-घादं णो करेज्ज कत्थ वि कया वि।
तिजोगेण तिकरणेण, सया पालेज्ज दया-धम्मं।।28।।

अन्वयार्थ—मनुष्य को **हिंसं**-हिंसा का **उज्झेज्ज**-त्याग करना चाहिए **कत्थ वि**-कहीं भी **कया वि**-कभी भी **जीव-घादं**-जीवों का घात **णो**-नहीं **करेज्ज**-करना चाहिए **तिजोगेण**-त्रियोग व **तिकरणेण**-तीन करण से **सया**-सदा **दया-धम्मं**-दया धर्म का **पालेज्ज**-पालन करना चाहिए।

क्रमिक व्रत-तप

जाण अहिंसा-धम्मो, पढमो सेसा अणंतरं होज्जा।
अणुव्वदं महव्वदं, संजम-तवो झाणं कमसो।।29।।

अन्वयार्थ—पढमो-सर्वप्रथम **अहिंसा**-अहिंसा **धम्मो**-धर्म **जाण**-जानो (क्योंकि) **सेसा**-शेष (धर्म इसके) **अणंतरं**-अनंतर **होज्जा**-होते हैं पुनः **कमसो**-क्रमशः **अणुव्वदं**-अणुव्रत **महव्वदं**-महाव्रत **संजम-तवो**-संयम, तप और **झाणं**-ध्यान होता है।

व्रतधारी के ध्यानादि संभव

जस्स अहिंसा सच्चं, अचोरं बंभ-मपरिग्गहं होज्ज।
झाण-वेरग्ग-भत्ती, वच्छल-तवो संभवो तस्स।।30।।

अन्वयार्थ—जस्स-जिसके **अहिंसा**-अहिंसा **सच्चं**-सत्य **अचोरं**-अचौर्य **बंभं**-ब्रह्मचर्य **अपरिग्गहं**-अपरिग्रह **होज्ज**-होते हैं **तस्स**-उसके ही **झाण-वेरग्ग-भत्ती**-ध्यान, वैराग्य, भक्ति **वच्छल-तवो**-वात्सल्य व तप **संभवो**-संभव है।

भोजन शुद्धि आवश्यक

करेज्ज भोयण-सुद्धिं, पुणो आयार-ववहार-सुद्धिं च।
किच्चा वियार-सुद्धिं, चिंतेज्ज सग-कल्लाणत्थं।।31।।

अन्वयार्थ—भोयण-सुद्धिं-भोजन की शुद्धि **करेज्ज**-करनी चाहिए **पुणो**-पुन: **आयार-ववहार-सुद्धिं च**-आचार और व्यवहार की शुद्धि करनी चाहिए (फिर) **वियार-सुद्धिं**-विचारों की शुद्धि **किच्चा**-करके **सग-कल्लाणत्थं**-स्व कल्याण के लिए **चिंतेज्ज**-चिंतन करना चाहिए।

अभक्ष्य त्याग

जाणि मणंति बहुदोस-हेदू ताणि अभक्खादि-वत्थूणि।
सुजणा उज्झेज्ज सया, सग-सग-भावाणुसारेणं।।32।।

अन्वयार्थ—सुजणा-सज्जन **जाणि**-जिन्हें **बहुदोस-हेदू**-बहुत दोष का कारण **मणंति**-मानते हैं वे **ताणि**-उन **अभक्खादि-वत्थूणि**-अभक्ष्यादि वस्तुओं को **सया**-सदा **सग-सग-भावाणुसारेणं**-अपने अपने भावों के अनुसार **उज्झेज्ज**-त्याग देते हैं।

कइवि उज्झेज्ज कंदं, कइवि अपक्क-फलाइं संधाणं।
कइवि णिसि-भोयणं तह, अण्णायज्जिद-अदणं कइवि।।33।।

अन्वयार्थ—कइवि-कई एक **कंदं**-कंद का **उज्झेज्ज**-त्याग करते हैं **कइवि**-कई एक **अपक्क-फलाइं**-अपक्व फल **संधाणं**-अचार का त्याग करते हैं **कइवि**-कई एक **णिसि-भोयणं**-रात्रि भोजन त्याग करते हैं **तह**-तथा **कइवि**-कई एक **अण्णायज्जिद-अदणं**-अन्याय से अर्जित भोजन का त्याग करते हैं।

पर दुःख भी निज दुःख सम

उज्झदे तिजोगेणं, हिंसा-कम्मं वयणं भावं सो।
परप्प-सुह-दुक्खाइं, अणुभवदि सग-सुह-दुहाणि जो।।34।।

अन्वयार्थ—जो-जो **परप्पसुहदुक्खाइं**-दूसरों की आत्मा के सुख दुःख को **सग-सुह-दुहाणि**-अपना सुख-दुःख **अणुभवदि**-अनुभव करता है **सो**-वह **तिजोगेणं**-त्रियोग से **हिंसा-कम्मं**-हिंसा कर्म **वयणं**-वचन व **भावं**-भाव को **उज्झदे**-त्याग देता है।

दुःख अनाकांक्षी

धम्मी णिट्ठावाणो, सग-सरूवं सद्दहदि जो सम्मं।
ण कंखदे कया वि सो, परदुहं तहेव सग-दुहं वि।।35।।

अन्वयार्थ—जो-जो **धम्मी**-धर्मी **णिट्ठावाणो**-निष्ठावान् **सग-सरूवं**-अपने स्वरूप का **सम्मं**-सही **सद्दहदि**-श्रद्धान करता है **सो**-वह **कया वि**-कभी भी **परदुहं**-दूसरों के दुःख **तहेव**-और उसी प्रकार **सग-दुहं**-अपने दुःख की **वि**-भी **ण कंखदे**-आकांक्षा नहीं करता।

विरक्त कौन ?

कंखदि परम-पदं जो, मुंचदि मोहं सव्व-पदत्थादो।
सो दुविह-संग-मुज्झदि, विरज्जदि भव-तण-भोयादो।।36।।

अन्वयार्थ—जो-जो **परम-पदं**-परम पद की **कंखदि**-आकांक्षा करता है **सो**-वह **सव्व-पदत्थादो**-सभी पदार्थों से **मोहं**-मोह को **मुंचदि**-छोड़ देता है **दुविह**-दोनों प्रकार के **संगं**-परिग्रह **उज्झदि**-त्याग देता है (तथा) **भव-तण-भोयादो**-संसार, शरीर, भोगों से **विरज्जदि**-विरक्त होता है।

परिग्रह त्याग

सवर-हिदेसी साहू, रक्खिदुं अहिंसा-वदं उज्झेदि।
सत्तीइ जहाजोग्गं, उहय-परिग्गहं णियमेणं।।37।।

अन्वयार्थ—सवर-हिदेसी साहू-स्वपर हितैषी साधु **अहिंसा-वदं**-अहिंसा व्रत की **रक्खिदुं**-रक्षा के लिए **सत्तीइ** शक्ति अनुसार **जहाजोग्गं** यथायोग्य **उहय-परिग्गहं** उभय (अंतरंग व बहिरंग) परिग्रह का **णियमेणं** नियम से **उज्झेदि** त्याग करते हैं।

संगासक्त के ध्यान नहीं

आरंभ-पाव-दुग्गदि-वियप्पाणं-कारणं परिग्गहो जाण।
जो खलु संगासत्तो, ण सक्को अप्प-झाणिदुं सो।।38।।

अन्वयार्थ—परिग्गहो-परिग्रह **आरंभ-पाव-दुग्गदि-वियप्पाणं-कारणं**-आरम्भ, पाप, दुर्गति और विकल्प का कारण है **जो**-जो **संगासत्तो**-परिग्रह में आसक्त है **सो**-वह **खलु**-निश्चय से **अप्प-झाणिदुं**-आत्म ध्यान करने में **सक्को**-समर्थ **ण**-नहीं है।

उत्कृष्ट साधु

संगो होदि णियमेण, कारणं बहुपाव-वियप्प-दुहाण।
उक्किट्ठ-साहू सव्व-संग-चागी दियंबरो तं।।39।।

अन्वयार्थ—संगो-संग (परिग्रह) **णियमेण**-नियम से **बहुपाव-वियप्प-दुहाण**-बहुत पाप, विकल्प और दु:खों का **कारणं**-कारण **होदि**-होता है **तं**-इसीलिए **सव्व-संग-चागी** सर्व परिग्रह के त्यागी **दियंबरो**-दिगंबर की **उक्किट्ठ-साहू**-उत्कृष्ट साधु हैं।

अविकारी दिगंबर संत

जहाजाद-दियंबरो, वियप्पासुह-संकप्पविहीणो य।
ववहारे सुभावणा, णिच्छये ण किंपि अवियारी।।40।।

अन्वयार्थ—जहाजाद-दियंबरो-यथाजात दिगम्बर साधु **अवियारी**-विकारों से हीन-अविकारी **वियप्पासुह-संकप्पविहीणो य**-सभी विकल्प और अशुभ संकल्पों से हीन हैं **ववहारे**-व्यवहार में उनकी **सुभावणा**-शुभ भावना है और **णिच्छये**-निश्चय में **किंपि ण**-कुछ भी नहीं है।

बालक सम निश्छल

बालोव्व दियंबरो हु, सहजो सरलो भगवंत-रूवो य।
सो केहिं णो पुज्जो, दियंबरो सय विस्स-पुज्जो।।41।।

अन्वयार्थ—दियंबरो-दिगंबर साधु **हु**-निश्चय से **बालोव्व**-बालक के समान **सहजो**-सहज **सरलो**-सरल **य**-और **भगवंत-रूवो**-भगवान् का रूप हैं **सो**-वे **केहिं**-किनके द्वारा **पुज्जो**-पूज्य **णो**-नहीं है? **दियंबरो**-दिगंबर संत **सय**-सदा **विस्स-पुज्जो**-विश्व-पूज्य हैं।

सर्वहिताय

अक्को इंदू मेहो, जह रयण-सरोवरं पसू रुक्खो।
होज्ज परहिदत्थं तह, दियंबरा सवर-हिदेसी हु।।42।।

अन्वयार्थ—जह-जिस प्रकार **अक्को**-सूर्य **इंदू**-चंद्रमा **मेहो**-मेघ **रयण-सरोवरं**-रत्न, सरोवर **पसू**-पशु **रुक्खो**-वृक्ष **परहिदत्थं**-पर हित के लिए **होज्ज**-होते हैं **तह**-उसी प्रकार **दियंबरा**-दिगंबर साधु **हु**-निश्चय से **सवर-हिदेसी**-स्व-पर हितैषी होते हैं।

दिगंबरत्व कैसा ?

दियंबरो णो णग्गो, णग्गो मेत्तं हु दियंबरो णेव।
बहिर-वत्थाइ-रहिदो, साहू सव्व-संग-चागी य।।43।।

अन्वयार्थ—दियंबरो-दिगंबर **णग्गो**-नग्न **णो**-नहीं है और **णग्गो**-नग्न **मेत्तं**-मात्र **दियंबरो**-दिगंबर **णेव**-नहीं हैं **हु**-निश्चय से **बहिर-वत्थाइ-रहिदो**-बाह्य वस्त्रादि से रहित **य**-और **सव्व-संग-चागी**-सर्व परिग्रह के त्यागी **साहू**-दिगंबर साधु हैं।

दिगंबर व नग्न मे अंतर

समत्त-सम्मत्त-जुदो, बहुगुण-पुंजो दियंबरो पुज्जो।
णग्गो ममत्त-जुत्तो, परवत्थूसु परभावेसुं।।44।।

अन्वयार्थ—समत्त-सम्मत्त-जुदो-समता भाव व सम्यक्त्व से युक्त **बहुगुणपुंजो**-बहुत गुणों के पुंज **दियंबरो**-दिगंबर संत **पुज्जो**-पूज्य है **णग्गो**-नग्न मात्र **परवत्थूसु**-परवस्तुओं व **परभावेसुं**-परभावों में **ममत्त-जुतो**-ममत्व से युक्त है।

विकार त्याग आवश्यक

अंतर-वियार-चागं, विणा ण संभवो साहणा सम्मं।
बहिर-संग-हवंतो वि, वियार-उज्झण-मसंभवो।।45।।

अन्वयार्थ—अंतर-वियार-चागं-अंतरंग विकार के त्याग के **विणा**-बिना **सम्मं**-समीचीन **साहणा**-साधना **संभवो**-संभव **ण**-नहीं है **बहिर-संग-हवंतो**-बाह्य परिग्रह होते हुए **वि**-भी **वियार-उज्झणं**-विकारों का त्याग करना **असंभवो**-असंभव है।

परिग्रह से हानि

बुद्धीइ गहदि साहू, बालग्ग-संगं णिय-मणित्ता जो।
णिव्वियप्प-झाणेदुं, तियाले ण होदि सक्को सो।।46।।

अन्वयार्थ—जो-जो **साहू**-साधु **बुद्धीइ**-बुद्धि पूर्वक **बालग्ग-संगं**-बाल के अग्र भाग बराबर परिग्रह को भी **णिय-मणित्ता**-अपना मानकर **गहदि**-ग्रहण करता है **सो**-वह **तियाले**-तीन काल में भी **णिव्वियप्प-झाणेदुं**-निर्विकल्प ध्यान करने में **सक्को**-समर्थ **ण**-नहीं **होदि**-होता।

ख-पुप्फं खर-विसाणं, अग्गी णीरे वंझाए पुत्तो।
ससंगस्स णिव्वियप्प-झाण-मसंभवो जहा तहा।।47।।

अन्वयार्थ—जहा-जिस प्रकार **ख-पुप्फं**-आकाश के पुष्प **खर-विसाणं**-गधे के सींग **णीरे**-नीर में **अग्गी**-अग्नि (और) **वंझाए**-बंध्या के **पुत्तो**-पुत्र **असंभवो**-असंभव है **तहा**-उसी प्रकार **स-संगस्स**-परिग्रह सहित के **णिव्वियप्प-झाणं**-निर्विकल्प ध्यान (असंभव है।)

सम्मत्तेण विणा णो, णाणं वदं वेरग्ग-भत्ति-तवा।
परिग्गह-चागं विणा, सयल-संजमो संभवो णो।।48।।

अन्वयार्थ—सम्मत्तेण विणा-सम्यक्त्व के बिना **णाणं-वदं**-ज्ञान व्रत **वेरग्गो**-वैराग्य **भत्ति-तवा**-भक्ति, तप **णो**-संभव नहीं है **परिग्गह-चागं**-परिग्रह त्याग के **विणा**-बिना **सयल-संजमो**-सकल संयम **संभवो**-संभव **णो**-नहीं है।

योगी

गेहादि-सव्व-संगं, मुंचित्तु सील-णिउणो जोगी सो।
अदत्तं ण गहदि कया, अहिंसगो सच्चवायी जो।।49।।

अन्वयार्थ—जो-जो **गेहादि-सव्व-संगं**-गृह आदि सर्व परिग्रह **मुंचित्तु**-त्यागकर **सील-णिउणो**-शील में निपुण है **कया**-कभी **अदत्तं**-बिना दिया **ण गहदि**-ग्रहण नहीं करता **अहिंसगो**-अहिंसक व **सच्चवायी**-सत्यवादी है **सो**-वह **जोगी**-योगी है।

पापी कौन ?

संग-जुदो लोही जो, माणाइ-कसाय-जुदो विसयी सो।
विसयासत्तो होज्जा, कहं हु पावविहीणो तहा।।50।।

अन्वयार्थ—हु-निश्चय से **संग-जुदो**-परिग्रह से युक्त **लोही**-लोभी होता है **जो**-जो (लोभी है) **सो**-वह **माणाइ-कसाय-जुदो**-मान आदि कषाय से युक्त होता है (और वह) **विसयी**-विषयी है **तहा**-तथा **विसयासत्तो**-विषयों में आसक्त **कहं**-किस प्रकार **पावविहीणो**-पापों से विहीन **होज्जा**-हो सकता है।

भगवान् रूप

बहिरंतरेगागी य, विमल-चित्तो णिच्छलो सहजो जो।
सवर-संतीइ सक्को, जोगी भगवंत-रूवो सो।।51।।

अन्वयार्थ—जो-जो **बहिरंतरे**-बाह्य व अभ्यंतर में **एगागी**-एकाकी है **विमल-चित्तो**-विमल चित्त वाला **णिच्छलो**-निश्छल **सहजो**-सहज **य**-और **सवर-संतीइ**-स्व पर शांति के लिए **सक्को**-समर्थ है **सो**-वह **जोगी**-योगी **भगवंत-रूवो**-भगवान् का रूप है।

आवरण युक्त, विकार त्याग असंभव

सावरणं सुवण्णं हु, किट्ट-कालिमं मुंचिदुं ण सक्कं।
स-वत्थाइ-आवरणं, मुणी वियार-चयिदु-मसक्को।।52।।

अन्वयार्थ—जिस प्रकार **सावरणं**-आवरण से सहित **सुवण्णं**-स्वर्ण **किट्ट-कालिमं**-किट्ट-कालिमा **मुंचिदुं**-छोड़ने में **सक्कं**-समर्थ **ण**-नहीं होता (उसी प्रकार) **हु**-निश्चय से **स-वत्थाइ-आवरणं**-वस्त्र आदि आवरण से युक्त **मुणी**-मुनि **वियार-चयिदुं**-विकारों के त्याग में **असक्को**-अशक्य हैं।

आरंभी, योगी नहीं

काम-कोह-माण-लोह-छल-तण्हा-विसय-वासणा-जुत्तो।
हिंसादि-पाव-सहिदो, होज्ज कहमारंभग-जोगी।।53।।

अन्वयार्थ—**काम-कोह-माण-लोह-छल-तण्हा-विसय-वासणा-जुत्तो**-काम, क्रोध, मान, लोभ, छल, तृष्णा, विषय-वासना से युक्त **हिंसादि-पाव-सहिदो**-हिंसा आदि पापों से सहित **आरंभगो**-आरंभक **कहं**-किस प्रकार **जोगी**-योगी **होज्ज**-हो सकता है।

मुनि

तिजोग-साहणा-जुदो, दुविह-संजम-पणमहव्वद-सहिदो।
मुणी अक्ख-णिग्गाही, समिदि-आवस्सग-पालगो हु।।54।।

अन्वयार्थ—**तिजोग-साहणा-जुदो**-त्रियोग साधना से युक्त **दुविह-संजम-पण-महव्वद-सहिदो**-दो प्रकार के संयम व पाँच महाव्रत से सहित **अक्ख-णिग्गाही**-इंद्रियों का निग्रह करने वाला **समिदि-आवस्सग-पालगो**-समिति व आवश्यक का पालक **हु**-निश्चय से **मुणी**-मुनि है।

योगी की शुद्धता

विसय-वासणा-रहिदो, कसाय-विहीणो परिग्गह-रहिदो।
सम्मत्त-णाण-वद-तव-झाण-जुदो जोगी सुद्धोहि।।55।।

अन्वयार्थ—विसय-वासणा-रहिदो-विषय-वासना से रहित **कसाय-विहीणो**-कषाय से विहीन **परिग्गह-रहिदो**-परिग्रह से रहित **सम्मत्त-णाण-वद-तव-झाण-जुदो**-सम्यक्त्व, ज्ञान, व्रत, तप, ध्यान से युक्त **जोगी**-योगी **हि**-ही **सुद्धो**-शुद्ध है।

केशलोंच क्यों ?

अयाचग-विट्टि-धारी, पाण-कंठागदे वि जायदे णो।
सया सवर-वत्थूदो, साहु-णिरीहो लुंचदि तदो।।56।।

अन्वयार्थ—अयाचग-विट्टि-धारी-अयाचक वृत्ति के धारक मुनि **पाण-कंठागदे**-प्राण कंठ में आ जाने पर **वि**-भी **णो जायदे**-याचना नहीं करते **साहू**-साधु **सया**-सदा **सवर-वत्थूदो**-स्व-पर की वस्तुओं से **णिरीहो**-निरीह होते हैं **तदो**-इसीलिए वे **लुंचदि**-केशलोंच करते हैं।

आहार क्यों व कैसे ?

गहदे भायणाइं ण, सुद्धाहारं करपत्ते जोगी।
उट्ठित्तु संजमत्थं, पमाद-हरिदु-मेगदा अददि।।57।।

अन्वयार्थ—जोगी-योगी **भायणाइं**-बर्तन आदि **गहदे ण**-ग्रहण नहीं करते (इसीलिए) **संजमत्थं**-संयम के लिए **सुद्धाहारं**-शुद्धाहार **करपत्ते**-करपात्र में ग्रहण करते हैं **एकदा**-एक बार **पमाद-हरिदुं**-प्रमाद के हरण के लिए **उट्ठित्तु**-खड़े होकर **अददि**-ग्रहण करते हैं।

यावज्जीवन खड़े होकर आहार की प्रतिज्ञा

जाव जंघा-बलं सो, ताव भुंजदि जोगी संजमत्थं।
जंघा-बल-खीणम्मि य, उज्झदि तं सल्लेहणत्थं।।58।।

अन्वयार्थ—जाव-जब तक **जंघा-बलं**-जंघाओं में बल है **ताव**-तब तक **सो**-वह **जोगी**-योगी **संजमत्थं**-संयम के लिए **भुंजदि**-आहार ग्रहण करता है **य**-और **जंघा-बल-खीणम्मि**-जंघा बल क्षीण (अर्थात् खड़े होने की शक्ति नष्ट) होने पर योगी **तं**-उस आहार का **सल्लेहणत्थं**-सल्लेखना के लिए **उज्झदि**-त्याग कर देता है।

सर्व परिग्रहत्यागी

परिग्गह-चागी मुणी, वसणासण-गिह-सेज्जा ण थक्कवदि।
वाहणं सेवगं तह, पसुधणं वित्तं अवि अण्णं।।59।।

अन्वयार्थ—परिग्गह-चागी-परिग्रह त्यागी **मुणी**-मुनि **वसणासण-गिह-सेज्जा**-वस्त्र, भोजन, गृह, शय्या **वाहण-सेवग-दव्वं**-वाहन, सेवक, द्रव्य **पसुधणं**-पशुधन **वित्तं**-वित्त **तह**-तथा **अण्णं**-अन्य **अवि**-भी **ण**-नहीं **थक्कवदि**-रखते।

शयन

कट्ठफलग-तिणसेज्जा-सहज-भु-पासाणे अप्पयालाय।
सयंतो वि जागरिओ, विम्हरदि अप्पसरूवं णो।।60।।

अन्वयार्थ—योगी मुनिराज **कट्ठ-फलग-तिणसेज्जा-सहज-भु-पासाणे**-काष्ठ फलग, तृण शय्या, सहज भूमि व पाषाण पर **अप्पयालाय**-अल्प काल के लिए **सयंतो**-सोते हुए **वि**-भी **जागरिओ**-जागृत रहते हैं और **अप्पसरूवं**-आत्मस्वरूप को **णो**-नहीं **विम्हरदि**-भूलते।

परगृह निवास

अस्सम-वसदि-मठाइं, ण णिम्मावंति तिकरणेण जोगी।
णो कुव्वंति ममत्तं, सप्पोव्व वसंति परगेहे।।61।।

अन्वयार्थ—जोगी-योगी **तिकरणेण**-त्रिकरण (कृत, कारित, अनुमोदना) से कभी **अस्सम-वसदि-मठाइं**-आश्रम, वसतिका, मठ आदि का **ण णिम्मावंति**-निर्माण नहीं करते वे **सप्पोव्व**-सर्प के समान **परगेहे**-पर गृह में **वसंति**-निवास करते हैं (और उन स्थानों में) **ममत्तं**-ममत्व **णो**-नहीं **कुव्वंति**-करते।

मुनियों की विशेषता

समीरोव्व णिस्संगं, खीरं व पुट्ठिमं णहोव्व विमलं।
सायरोव्व गंभीरं, अक्कोव्व परक्कमिं साहुं।।62।।

दगं व कंतिजुत्तं च, पुत्तोव्व सेवगं पिदुव्व रक्खं।
णीरं व सीयलं तह, पदीवोव्व सगवर-पयासिं।।63।।

पोम्मोव्व अणासत्तं, मेरुव्व अडिगं इक्खुव्व महुरं।
इंदोव्व साहिमाणिं, अमियं व वय-जुद-सुह-हेदुं।।64।।

मिगोव्व वणयारि-मुणिं, सीहोव्व सूरं उसहोव्व भद्दं।
सय रयणं व अमुल्लं, पणमामि पहुव्व जगपुज्जं।।65।।

अन्वयार्थ—समीरोव्व-वायु के समान **णिस्संगं**-नि:संग **खीरं व**-दूध के समान **पुट्ठिमं**-पुष्ट करने वाला **णहोव्व**-आकाश के समान **विमलं**-विमल **सायरोव्व**-सागर के समान **गंभीरं**-गंभीर **अक्कोव्व**-सूर्य के समान **परक्कमिं**-पराक्रमी **साहुं**-साधु **दगं व**-स्फटिक मणि के समान **कंतिजुत्तं**-कांतियुक्त **च**-और **पुत्तोव्व**-पुत्र के समान **सेवगं**-

सेवक **पिदुव्व**-पिता के समान **रक्खं**-रक्षक **णीरं व**-नीर के समान **सीयलं**-शीतल **पदीवोव्व**-प्रदीप के समान **सगवर-पयासिं**-स्व-पर प्रकाशी **पोम्मोव्व**-कमल के समान **अणासत्तं**-अनासक्त **मेरुव्व**-मेरु के समान **अडिगं**-अडिग **इक्खुव्व**-इक्षु के समान **महुरं**-मधुर **इंदोव्व**-इंद्र के समान **साहिमाणिं**-स्वाभिमानी **अमियं व**-अमृत के समान **वय-जुदं**-वचनों से युक्त **सुह-हेदुं**-सुख के हेतु **मिगोव्व वणयारि-मुणिं**-हरिण के समान वनचारी मुनि **सीहोव्व**-सिंह के समान **सूरं**-शूर **उसहोव्व**-वृषभ के समान **भद्दं**-भद्र **रयणं व**-रत्न के समान **अमुल्लं**-अमूल्य **तह**-तथा **पहुव्व**-प्रभु के समान **जगपुज्जं**-जगपूज्य मुनिवर को **सय**-सदा **पणमामि**-प्रणाम करता हूँ।

इंद्रिय जयी

फास-रसण-घाण-चक्खु-कण्णक्ख-जयी मण-णिग्गाही जे।
सवर-हिदेसी साहू, किं ण होज्ज विस्स-पुज्जा ते।।66।।

अन्वयार्थ—जे-जो **साहू**-साधु **फास-रसण-घाण-चक्खु-कण्णक्ख-जयी**-स्पर्श, रसना, घ्राण, चक्षु, कर्ण इंद्रिय जयी **मण-णिग्गाही**-मन का निग्रह करने वाले **सवर-हिदेसी**-स्व-पर हितैषी हैं **ते**-वे **विस्स-पुज्जा**-विश्व पूज्य **किं**-क्यों **ण**-नहीं **होज्ज**-होते अर्थात् अवश्य होते हैं।

प्रकृति युक्त मुनि

पइडि-रूवं धरित्ता, पइडि-भाव-वयण-किरिया-सहिदो य।
अंतर-बहि-पइडि-जुदो, जहाजाद-मुणी परमप्पा।।67।।

अन्वयार्थ—पइडि-रूवं-प्रकृति रूप **धरित्ता**-धारण कर **पइडि-भाव-वयण-किरिया-सहिदो य**-प्रकृति भाव, वचन और क्रिया

से सहित **अंतर-बहि-पइडि-जुदो**-अंतरंग-बाह्य प्रकृति से युक्त **जहाजाद-मुणी**-यथाजात मुनि **परमप्पा**-परमात्मा है।

धरती पर वरदान-दिगंबर मुनि

सहज-ववहार-णिम्मल-मण-सोम्ममुद्दा-सुहिद-वयण-जुदो।
सुद्धप्प-झाण-जुत्तो, दियंबरो हु लोयम्मि वरो।।68।।

अन्वयार्थ—सहज-ववहार-णिम्मल-मण-सोम्ममुद्दा-सुहिद-वयण-जुदो-सहज व्यवहार, निर्मल मन, सौम्य मुद्रा, सुहित वचनों से युक्त **सुद्धप्प-झाण-जुत्तो**-शुद्धात्म ध्यान से युक्त **दियंबरो**-दिगंबर साधु **हु**-निश्चय से **लोयम्मि**-लोक में **वरो**-वरदान हैं।

रोगहारक

ताण पग-रजं पुज्जं, फासिअ-पवणं वि हरदि बहु-रोयं।
अमियं व-सुहिद-वयणं, दंसणं च सग्गोव्व सुहदं।।69।।

अन्वयार्थ—ताण-उनकी (दिगंबर साधु की) **पग-रजं**-पगरज **पुज्जं**-पूज्य है **फासिअ-पवणं**-उनसे संस्पर्शित पवन **वि**-भी **बहु-रोयं**-बहुत रोग को **हरदि**-हरती है **अमियं व-सुहिद-वयणं**-उनके अमृत के समान सुंदर हित करने वाले वचन **च**-और **दंसणं**-दर्शन **सग्गोव्व**-स्वर्ग के समान **सुहदं**-सुख देने वाला है।

तप से ऋद्धि

अणेय-पयार-इड्ढी, लहंति सग-सग-तवाणुसारेणं।
एग-रिद्धि-संजुदा वि, मुणी लोय-हिदत्थं सक्का।।70।।

अन्वयार्थ—मुणी-मुनि **सग-सग-तवाणुसारेणं**-अपने-अपने तप के अनुसार **अणेय-पयार-इड्ढी**-अनेक प्रकार की ऋद्धि **लहंति**-

प्राप्त करते हैं **एग-रिद्धि-संजुदा**-एक ऋद्धि से युक्त **वि**-भी **लोय-हिदत्थं**-लोक का हित करने में **सक्का**-समर्थ हैं।

निःस्वार्थ बंधु

रायद्दोस-विहीणो, कस्स ण रिऊ सव्व-मित्ताणि जस्स।
सयं णिस्सत्थ-बंधू, मुणिव्व जगे अण्ण-मित्तं ण।।71।।

अन्वयार्थ—रायद्दोस-विहीणो-राग-द्वेष से विहीन दिगंबर मुनि जो **कस्स**-किसी के **रिऊ**-शत्रु **ण**-नहीं है **जस्स**-जिनके **सव्व-मित्ताणि**-सभी मित्र हैं जो **सयं**-स्वयं **णिस्सत्थ-बंधू**-निःस्वार्थ मित्र हैं उन **मुणिव्व**-मुनि के समान **जगे**-संसार में **ण अण्ण-मित्तं**-कोई अन्य मित्र नहीं है।

अण्णाइं मित्ताइं, सत्थेण कुव्वंति रायं णिच्चं।
सत्थेण विणा ण को वि, होज्जा मित्तं जदवि पिदरा।।72।।

अन्वयार्थ—अण्णाइं-अन्य **मित्ताइं**-मित्र **णिच्चं**-नित्य **सत्थेण**-स्वार्थ से **रायं**-राग **कुव्वंति**-करते हैं **सत्थेण**-स्वार्थ के **विणा**-बिना **को वि**-कोई भी **मित्तं**-मित्र **ण**-नहीं **होज्जा**-होता **जदवि**-यद्यपि **पिदरा**-माता-पिता भी।

सुभिक्षता

पर-सुक्खं अहिलसंति, सगोव्व जे हु णिम्मल-चित्त-साहू।
ते धीरा विहरंते, जत्थ वि सुभिक्खं होज्ज तत्थ।।73।।

अन्वयार्थ—जे-जो **हु**-निश्चय से **सगोव्व**-अपने समान **पर-सुक्खं**-दूसरों के सुख की **अहिलसंति**-अभिलाषा करते हैं **ते**-वे **णिम्मल-चित्त-साहू धीरा**-निर्मल चित्त धीर साधु **जत्थ वि**-जहाँ भी **विहरंते**-विहार करते हैं **तत्थ**-वहाँ **सुभिक्खं**-सुभिक्ष **होज्ज**-होता है।

निवास स्थान

णिज्जरेगंत-देसे, गामे णयरे महाणयर-णिगडे।
गिरि-गुहा-कंदरासु, जिणगिहम्मि वसदीए तहा।।74।।
समुदाय-भवणम्मि वा, णदि-तडे विज्जालये उज्जाणे।
जत्थ साहणा वड्ढदि, वसंति दियंबर-मुणी तत्थ।।75।।

अन्वयार्थ—णिज्जरेगंत-देसे-निर्जर एकांत प्रदेश **गामे**-ग्राम **णयरे**-नगर **महाणयर-णिगडे**-महानगर के निकट **गिरि-गुहा-कंदरासु**-पर्वत, गुफा, कंदरा **जिणगिहम्मि**-जिनगृह **तहा**-तथा **वसदीए**-वसतिका **समुदाय-भवणम्मि**-समुदाय भवन **णदि-तडे**-नदी के तट **विज्जालये**-विद्यालय **वा**-अथवा **उज्जाणे**-उद्यान में **जत्थ**-जहाँ **साहणा**-साधना **वड्ढदि**-वृद्धिंगत होती है **तत्थ**-वहाँ **दियंबर-मुणी**-दिगंबर मुनि **वसंति**-निवास करते हैं।

वन निवास निषेध

अस्सिं पंचम-याले, हीण-संहणण-जुदा होंति जीवा।
तहेव साहू तम्हा, वणेगंते वसिदुमसक्का।।76।।

अन्वयार्थ—अस्सिं-इस **पंचम-याले**-पंचम काल में **जीवा**-जीव **हीण-संहणण-जुदा**-हीन संहनन से युक्त **होंति**-होते हैं **तहेव**-उसी प्रकार **साहू**-साधु भी (हीन संहनन से युक्त हैं) **तम्हा**-इसीलिए वे **वणेगंते**-वन व एकांत में **वसिदुं**-वास करने में **असक्का**-असमर्थ हैं।

उपकरणादि दान

गिहत्थ-सावगेण य, करिज्जदे परिचरणा सद्धाए।
दियंबर-साहूणं हु, भत्ती आराहणा पूया।।77।।

उवयरणोसहि-दाणं, धम्म-रक्खिदुं संबलं दाएज्ज।
जिणसासण-विड्ढीए, मुक्ख-हेदू होज्ज धम्मस्स।।78।।

अन्वयार्थ—गिहत्थ-सावगेण-गृहस्थ श्रावक के द्वारा **दियंबर-साहूणं**-दिगंबर साधुओं की **सद्धाए**-श्रद्धापूर्वक **परिचरणा**-परिचरणा **भत्ती**-भक्ति **आराहणा**-आराधना **च**-और **पूया**-पूया **करिज्जदे**-की जाती है **धम्म-रक्खिदुं**-उनके धर्म की रक्षा के लिए **उवयरणोसहि-दाणं**-उपकरण, औषधि आदि का दान व **संबलं**-संबल **दाएज्ज**-दिया जाता है (ये कार्य) **धम्मस्स**-धर्म के लिए **होज्ज**-होते हैं व **हु**-निश्चय से **जिणसासण-विड्ढीए**-जिन शासन की वृद्धि के **मुक्ख-हेदू**-मुख्य हेतु हैं।

त्रियोग शुद्धि हेतु उपकरण

कमंडलुं देह-सुद्धि-कारणं पिच्छिं जीव-रक्खेदुं।
मण-सुद्धीइ आगमं, गहंति ताण संगदिं कुणदु।।79।।

अन्वयार्थ—दिगंबर संत **देह-सुद्धि-कारणं**-देह की शुद्धि के कारण **कमंडलुं**-कमंडलु व **जीव-रक्खेदुं**-जीव रक्षा के लिए **पिच्छिं**-पिच्छी **गहंति**-ग्रहण करते हैं **मण-सुद्धीइ**-मन की शुद्धि के लिए **आगमं**-आगम पढ़ते हैं (भव्यों को) **ताण**-उनकी **संगदिं**-संगति **कुणदु**-करनी चाहिए।

मुनि वंदना

णिवसदि णिय-चित्ते जो, विहरेदि जिणसमयाणुसारेणं।
पोग्गलं अप्पसत्तू, मणदि तं दियंबरं वंदे।।80।।

अन्वयार्थ—जो-जो **णिय-चित्ते**-निज चित्त में **णिवसदि**-निवास करते हैं **जिणसमयाणुसारेणं**-कभी जिन आगम के अनुसार **विहरेदि**-

विहार करते हैं **पोग्गलं**-पुद्गल को **अप्पसत्तू**-आत्मा का शत्रु **मणदि**-मानते हैं **तं**-उन **दियंबरं**-दिगंबर साधु की **वंदे**-वंदना करता हूँ।

मुनि क्रिया

लुंचंति णिय-करेहिं, दियंबरा देह-सिंगार-रहिदा।
धुवंति ण राय-वसेण, दंतं ते णो ण्हंति कया वि।।81।।

अन्वयार्थ—देह-सिंगार-रहिदा-देह श्रृंगार से रहित **दियंबरा**-दिगंबर साधु **णिय-करेहिं**-अपने हाथों से अपने **लुंचंति**-बालों को उखाड़ते हैं **ते**-वे **कया वि**-कभी भी **राय-वसेण**-राग के वश **दंतं**-दाँतों को **ण**-नहीं **धुवंति**-धोते **णो**-ना ही **ण्हंति**-स्नान करते।

साधु द्वारा अकरणीय

णो रुदंते हसंते, कया वि णो णिंदंति परा साहू।
णो हिंसंति वदंति य, मोसं ण सेवंति अबंभं।।82।।

अन्वयार्थ—साहू-साधु **णो**-न **रुदंते**-रोते हैं, न **हसंते**-हँसते हैं **कया वि**-कभी भी **परा**-दूसरों की **णो णिंदंति**-निंदा नहीं करते **णो**-न **हिंसंति**-हिंसा करते, न **मोसं**-झूठ **वदंति**-बोलते **य**-और **ण**-न **अबंभं**-अब्रह्म का **सेवंति**-सेवन करते।

णो कया वि धावंते, रत्तीए गमणं कुव्वंते णो।
भुंजंति रत्तीए ण, णो णीरं वि गहंति जोगी।।83।।

अन्वयार्थ—जोगी-योगी **कया वि**-कभी भी **धावंते णो**-भागते नहीं **रत्तीए**-रात्रि में **गमणं**-गमन **णो**-नहीं **कुव्वंते**-करते **रत्तीए**-रात्रि में **भुंजंति ण**-भोजन नहीं करते व **णीरं**-पानी **वि**-भी **णो गहंति**-ग्रहण नहीं करते।

विहार काल

अक्क-पयासे दिवसे, विहरंति, सुह-पयोजणेण साहू।
सुहुम-जीव-रक्खेदुं, पस्सित्ता वि चउ-कर-भूमिं।।84।।

अन्वयार्थ—साहू-दिगम्बर साधु **सुहुम-जीव-रक्खेदुं वि**-सूक्ष्म जीवों की रक्षा के लिए भी **चउ-कर-भूमिं**-चार हाथ भूमि को **पस्सित्ता**-देखकर **दिवसे**-दिन में **अक्क-पयासे**-सूर्य के प्रकाश में **सुह-पयोजणेण**-शुभ प्रयोजन से ही **विहरंति**-विहार करते हैं।

मुनि वचन

हिद-मिद-पिय-वयणं सय, सवर-हिदत्थं धम्माणुसारेण।
णिंदणीय-अलीग-कडु-परुस-वयं णो वदंति मुणी।।85।।

अन्वयार्थ—मुणी-मुनि **सय**-सदा **सवर-हिदत्थं**-स्व-पर हित के लिए **धम्माणुसारेण**-धर्मानुसार **हिद-मिद-पिय-वयणं**-हित, मित, प्रिय वचन **वदंति**-बोलते हैं कभी **णिंदणीय-अलीग-कडु-परुस-वयं**-निंदनीय, झूठ, कटु, कठोर वचन **णो**-नहीं बोलते।

आहार विधि

सुद्ध-सयायारि-गिहे, आहारंति एगहुत्त उट्ठित्तु।
करपत्ते दियंबरा, परकरेहि भायणे ण कया।।86।।

अन्वयार्थ—दियंबरा-दिगंबर साधु **सुद्ध-सयायारि-गिहे**-शुद्ध, सदाचारी के गृह में **एगहुत्त**-एक बार **उट्ठित्तु**-खड़े होकर **करपत्ते**-कर पात्र में **आहारंति**-आहार ग्रहण करते हैं **परकरेहि**-दूसरों के हाथ से या **भायणे**-बर्तन में **ण कया**-कभी आहार ग्रहण नहीं करते।

आदान निक्षेपण समिति

पमज्जित्तु पिच्छीए, खेवदि गहदे दियंबरो वत्थुं।
सु-आदाण-णिक्खेवण-समिदिं सव्वदा हि पालेदि।।87।।

अन्वयार्थ—दियंबरो-दिगंबर साधु **पिच्छीए**-पिच्छी से **पमज्जित्तु**-प्रमार्जन कर **वत्थुं**-वस्तु को **गहदे**-ग्रहण करते हैं **खेवदि**-रखते हैं वे **सव्वदा**-सर्वदा **हि**-ही **सु-आदाण-णिक्खेवण-समिदिं**-समीचीन आदान-निक्षेपण समिति का **पालेदि**-पालन करते हैं।

उत्सर्ग समिति

पुण्णरूवेण पस्सिय, भूमिं तदा चयदि मल-मुत्ताइं।
जीव-रक्खंतो मुणी, सु-उस्सग्ग-समिदिं पालेदि।।88।।

अन्वयार्थ—मुणी-मुनि **जीव-रक्खंतो**-जीवों की रक्षा करते हुए **पुण्णरूवेण**-पूर्ण रूप से **भूमिं**-भूमि को **पस्सिय**-देखकर **तदा**-तब **मल-मुत्ताइं**-मल-मूत्रादि का **चयदि**-त्याग करते हैं (व) **सु-उस्सग्ग-समिदिं**-सम्यक् उपसर्ग समिदि का **पालेदि**-पालन करते हैं।

गमन विधि

जोगी ण वाहणाइं, पउंजंति पद-गमणं हि कुव्वंति।
वाहणेण गमणेणं, जीव-रक्खणं संभवो णो।।89।।

अन्वयार्थ—जोगी-योगी साधु **वाहणाइं**-वाहनों का **ण पउंजंति**-प्रयोग नहीं करते **पद-गमणं**-पद-गमन **हि**-ही **कुव्वंति**-करते हैं **वाहणेण**-वाहन से **गमणेणं**-गमन करने से **जीव-रक्खणं**-जीवों की रक्षा करना **संभवो**-संभव **णो**-नहीं है।

आरंभ त्यागी

जोगी णो पाविट्ठो, ण हिंसगो ण जीवघादगो होज्ज।
ण पयदि भोयणं कया, आरंभगो य कहं साहू।।90।।

अन्वयार्थ—जोगी-योगी **पाविट्ठो**-पापिष्ठ **णो**-नहीं **होज्ज**-होते **ण**-न **हिंसगो**-हिंसक **य**-और **ण**-न **जीवघादगो**-जीवघातक वे **कया**-कभी **भोयणं**-भोजन **ण**-नहीं **पयदि**-पकाते **आरंभगो**-आरंभक **साहू**-साधु **कहं**-कैसे हो सकते हैं।

संयमार्थ केशलोंचन

दिग्घ-केसा करंति ण, दिग्घ-केसेसुं होज्ज बहु-जीवा।
ताण हिंसाए कहं, जहत्था य संजमी साहू।।91।।

अन्वयार्थ—साधु **दिग्घ-केसा**-बाल बड़े **ण**-नहीं **करंति**-करते क्योंकि **दिग्घ-केसेसुं**-दीर्घ केशों में **बहु-जीवा**-बहुत जीव **होज्ज**-होते हैं और **ताण**-उनकी **हिंसाए**-हिंसा से **कहं**-किस प्रकार **जहत्था**-यथार्थ **य**-और **संजमी**-संयमी **साहू**-साधु हो सकते हैं?

अयाचक

सयं भोयणे पयणे, होज्ज जायग-विट्टी ताण पयदि ण।
बहु-आरंभो पावं, भायणाइ-संग-गहणे तह।।92।।

अन्वयार्थ—ताण-उन मुनियों के **सयं**-स्वयं **भोयणे**-भोजन **पयणे**-पकाने पर **जायग-विट्टी**-याचक वृत्ति **होज्ज**-होगी **तह**-तथा (उसके निमित्त से) **भायणाइ-संग-गहणे**-बर्तन आदि परिग्रह ग्रहण करने पर **बहु-आरंभो**-बहुत आरंभ **पावं**-व पाप होता है इसीलिए वे **ण पयदि**-भोजन नहीं पकाते।

जदि गहंति वत्थं ते, वत्थं ता होदि णियमेण मलिणं।
जायेज्ज धोविदुं तं, एवमेव होंति णो साहू।।93।।

अन्वयार्थ—जदि-यदि **ते**-वे **वत्थं**-वस्त्र **गहंति**-ग्रहण करते हैं **ता**-तो **वत्थं**-वस्त्र **णियमेण**-नियम से **मलिणं**-मैले **होदि**-होते हैं **तं**-उनको **धोविदुं**-धोने के लिए **जायेज्ज**-याचना करनी पडेगी व **साहू**-साधु **एवमेव**-इस प्रकार **णो**-नहीं **होंति**-होते।

भोगी-योगी

जायगो कहं साहू, सो भिक्खू रायद्देसी भोगी।
कोसम्मि बे असी णो, ण भोगी जोगी इगठाणे।।94।।

अन्वयार्थ-**जायगो**-याचक **कहं**-किस प्रकार **साहू**-साधु हो सकता है **सो**-वह तो **भिक्खू**-भिक्षु **रायद्देसी**-रागी-द्वेषी **भोगी**-भोगी है जिस प्रकार **कोसम्मि**-एक म्यान में **बे असी**-दो तलवार **णो**-नहीं हो सकती उसी प्रकार **भोगी**-भोगी **जोगी**-योगी **इगठाणे**-एक स्थान पर **ण**-नहीं हो सकते।

सतत् विहारी

णो होंति कया वि जहा, तिमिरं पयासो एग-पदेसम्मि।
तहा पाव-जुद-भोगी, संजमी णिम्मोही जोगी।।95।।

अन्वयार्थ-**जहा**-जिस प्रकार **एग-पदेसम्मि**-एक प्रदेश पर **तिमिरं**-अंधकार व **पयासो**-प्रकाश **कया वि**-कभी भी एक साथ **णो**-नहीं **होंति**-होते **तहा**-उसी प्रकार **पाव-जुद-भोगी**-पाप युक्त भोगी व **संजमी**-संयमी **णिम्मोही**-निर्मोही **जोगी**-योगी भी कभी एक साथ नहीं रहते।

शीलपालन

अक्ख-णिग्गहणं उण्ह-सीद-सहणं मोणं सरलो तहा।
असण-वसण-उज्झणं वि, सरलो सील-पालणं णत्थि।।96।।

अन्वयार्थ-अक्ख-णिग्गहणं-इंद्रियों का निग्रह करना **उण्ह-सीद-सहणं**-गर्मी, सर्दी सहन करना **सरलो**-सरल है **मोणं**-मौन सरल है **तहा**-तथा **असण-वसण-उज्झणं**-भोजन, वस्त्रों का त्याग करना **वि**-भी सरल है किन्तु **सील-पालणं**-शील का पालन करना **सरलो**-सरल **णत्थि**-नहीं है।

अतिदुर्लभ

दुल्लहो णर-पज्जयो, सुकुलो सुसंगदी धम्म-बुद्धी य।
जिणिंद-णिग्गंथागम-लहण-मइ-दुल्लहं स-सेयं।।97।।

अन्वयार्थ—णर-पज्जयो-नर-पर्याय **दुल्लहो**-दुर्लभ है **सुकुलो**-श्रेष्ठ कुल **सुसंगदी**-अच्छी संगति **धम्म-बुद्धी**-धर्म बुद्धि दुर्लभ है **जिणिंद-णिग्गंथागम-लहणं**-जिनेन्द्र प्रभु, निर्ग्रंथ गुरु, जिनागम का प्राप्त करना दुर्लभ है **य**-और **स-सेयं**-स्वकल्याण **अइ-दुल्लहं**-अति दुर्लभ है।

सावय-वदं दुल्लहं, दुल्लहा विवेग-सुकिरिया-सद्धा।
भव-तण-भोय-विरत्ती, साहु-जीवण-मइ-दुल्लहं हु।।98।।

अन्वयार्थ—सावय-वदं-श्रावक व्रत **दुल्लहं**-दुर्लभ है **विवेग-सुकिरिया-सद्धा**-विवेक, शुभ क्रिया, श्रद्धा **दुल्लहा**-दुर्लभ है **भव-तण-भोय-विरत्ती**-संसार-शरीर-भोगों से विरक्ति दुर्लभ है **हु**-निश्चय से **साहु-जीवणं**-साधु जीवन **अइ-दुल्लहं**-अति दुर्लभ है।

निर्वाण साधक

जो इंदिय-णिग्गहाय, तविदुं संजम-पालिदुं समत्थो।
सो अप्प-झाण-जोग्गो, जोगी लहेदुं णिव्वाणं।।99।।

अन्वयार्थ—जो-जो **इंदिय-णिग्गहाय**-इंद्रिय निग्रह के लिए **तविदुं**-तप करने व **संजम-पालिदुं**-संयम पालन के लिए **समत्थो**-समर्थ है **सो**-वह **जोगी**-योगी **अप्प-झाण-जोग्गो**-आत्म ध्यान के योग्य है व **णिव्वाणं**-निर्वाण **लहेदुं**-प्राप्त करने में समर्थ है।

जिनकल्पी

जस्स णो बहिर-गंथो, ण को वि वियार-गंथो अंतरम्मि।
सो जिणकप्पी साहू, समत्थो परमपदं लहिदुं।।100।।

अन्वयार्थ—जस्स-जिसके **बहिर-गंथो**-बाह्य परिग्रह **णो**-नहीं है व **अंतरम्मि**-अंतरंग में **को वि**-कोई भी **वियार-गंथो**-विकार रूपी परिग्रह **ण**-नहीं है **सो**-वह **जिणकप्पी**-जिनकल्पी **साहू**-साधु **परम पदं**-परम पद **लहिदुं**-प्राप्त करने में **समत्थो**-समर्थ है।

विकृति से प्रकृति नहीं

विक्किद-रूवो भोगी, ण होदुं सक्को जहाजाद-मुणिं।
अप्प-गुणं पाविदुं च, णो कया वि कम्मक्खयेदुं।।101।।

अन्वयार्थ—विक्किद-रूवो भोगी-प्रकृति से विपरीत विकृत रूप भोगी **जहाजाद-मुणिं**-यथाजात मुनि **होदुं**-होने के लिए **सक्को**-समर्थ **ण**-नहीं है **अप्प-गुणं**-आत्म गुण **पाविदुं**-प्राप्त करने के लिए **च**-और **कम्मक्खयेदुं**-कर्म क्षय के लिए **कया वि**-कभी भी **णो**-समर्थ नहीं होता।

दिगंबर रूप ही क्यों ?

विक्किद-रूवो भोगी, सस्सदं सिद्ध-पदं समत्थो णो।
सग-सरूवं पाविदुं, तं दियंबर-रूवावसियो।।102।।

अन्वयार्थ—विक्किद-रूवो-विकृत रूप **भोगी**-भोगी **सग-सरूवं**-स्व-स्वरूप व **सस्सदं**-शाश्वत **सिद्धपदं**-सिद्ध पद को **पाविदुं**-प्राप्त करने में **समत्थो**-समर्थ **णो**-नहीं है **तं**-इसीलिए **दियंबर-रूवो**-दिगंबर रूप **आवसियो**-आवश्यक है।

कमंडलु

कमंडलू साहूणं, होज्ज सहज-णारिगेल-तुंबीए।
णेव रयण-धादूणं, णो होदि वियप्पो गहणम्मि।।103।।

अन्वयार्थ—साहूणं-साधुओं के **कमंडलू**-कमंडलु **सहज-णारिगेल-तुंबीए**-सहज नारियल या तुंबी के **होज्ज**-होते हैं **रयण-धादूणं**-रत्न व धातुओं के **णेव**-कभी नहीं होते हैं उन नारियल तुंबी के कमंडल **गहणम्मि**-ग्रहण करने पर **वियप्पो**-विकल्प **ण**-नहीं **होदि**-होता है।

पिच्छी क्या व क्यों ?

पिच्छ-णिम्मिदा पिच्छी, होज्ज अइ-रिउ-णिम्मल-लहु-पिच्छाणि।
जल-सेद-रजं ण गहदि, उत्तम-पमज्जिगा मुणीणं।।104।।

अन्वयार्थ—पिच्छी-पिच्छी **पिच्छ-णिम्मिदा**-मयूर पंखों से निर्मित होती है **अइ-रिउ-णिम्मल-लहु-पिच्छाणि**-मयूर पंख अति ऋजु, निर्मल, लघु **होज्जा**-होते हैं (वह पिच्छी) **जल-सेद-रजं**-जल, पसीना, धूलकण **ण गहदि**-ग्रहण नहीं करता (वह) **मुणीणं**-मुनियों की **उत्तम-पमज्जिगा**-उत्तम प्रमार्जिका है।

मऊरो स-पंखुडिआ, उज्झदि सहजदाइ तरू पत्ताणि।
सहजुवलद्ध-कलावा, णियमेण अहिंसा-खेत्तम्मि।।105।।

अन्वयार्थ—मऊरो-मयूर (उसी प्रकार) **स-पंखुडिआ**-अपने पंखों को **सहजदाइ**-सहजता से **उज्झदि**-त्याग देता है (जैसे) **तरू**-पेड़ **पत्ताणि**-अपने पत्तों को **कलावा**-मयूर के पंख **अहिंसा-खेत्तम्मि**-अहिंसा के क्षेत्र में **णियमेण**-नियम से **सहजुवलद्धा**-सहज उपलब्ध हैं।

कलावो बुड्डदे णो, पोम्मव्वलित्तो चोप्पडं ण गहदि।
जीव-रक्खिदुं जोग्गो, पीडयरो णेव णयणाणं।।106।।

अन्वयार्थ—कलावो-मोर का पंख जल में **णो बुड्डदे**-डूबता नहीं **चोप्पडं**-घी, तेल आदि स्निग्ध रस **ण गहदि**-ग्रहण नहीं करता (वह) **पोम्मव्व**-कमल के समान **अलित्तो**-अलिप्त है **जीव-रक्खिदुं**-जीव रक्षा के लिए **जोग्गो**-योग्य है (तथा) **णयणाणं**-नेत्रों के लिए भी **पीडयरो**-पीड़ाकारक **णेव**-नहीं है।

अशुद्ध औषधि भी नहीं

जदि साहू रोय-जुदो, सुद्धोसहिं गहदि णिरवज्जं सो।
सावज्जोसहिं णेव, किंचिवि कया कत्थ वि याले।।107।।

अन्वयार्थ—जदि-यदि **साहू**-साधु **रोय-जुदो**-रोग से युक्त है तो **सो**-वह **णिरवज्जं**-निरवद्य **सुद्धोसहिं**-शुद्ध औषधि को **गहदि**-ग्रहण करता है **किंचिवि**-किंचित् भी **कया**-कभी भी **कत्थ वि याले**-कहीं भी किसी भी काल में **सावज्जोसहिं**-सावद्य औषधि को **णेव**-ग्रहण नहीं करता।

सहिष्णु

णिअमदि णिय-चित्तं जो, वयणं तहेव देह मप्प-भावं।
तं साहु-मप्पलीणं, उत्तम-सहिण्हुं णमंसामि।।108।।

अन्वयार्थ—जो-जो **णिय-चित्तं**-निज चित्त को **णिअमदि**-नियंत्रित करता है **वयणं**-वचन, **देहं**-देह **तहेव**-और उसी प्रकार **अप्प-भावं**-आत्म भाव पर (नियंत्रण करता है) **तं**-उन **अप्पलीणं**-आत्मलीन **उत्तम-सहिण्हुं**-उत्तम सहिष्णु **साहु**-साधु को **णमंसामि**-नमस्कार करता हू।

आत्मानंद भोगी

जो भोय-परिच्चागी, परदव्वादो पुण्ण-विरत्तो सो।
जोगी हु अप्पाणंद-भोगी विस्स-पुज्जो णिच्चं।।109।।

अन्वयार्थ—जो-जो **भोय-परिच्चागी**-भोगों का परित्यागी **परदव्वादो**-पर द्रव्यों से **पुण्ण-विरत्तो**-पूर्ण विरक्त है **सो**-वह **णिच्चं**-नित्य **अप्पाणंद-भोगी**-आत्मा के आनन्द का भोगी व **हु**-निश्चय से **विस्स-पुज्जो**-विश्व पूज्य **जोगी**-योगी है।

संयमी

अहिंसाइ-महव्वदं, सम्मत्ताइ-अण्ण-सेस-गुणा जो।
जावज्जीवं धारदि, तं जम-जुद-संजमिं वंदे।।110।।

अन्वयार्थ—जो-जो **अहिंसाइ-महव्वदं**-अहिंसादि महाव्रत **सम्मत्ताइ-अण्ण-सेस-गुणा**-सम्यक्त्वादि गुण अन्य शेष गुणों को **जावज्जीवं**-यावज्जीवन **धारदि**-धारण करता है **तं**-उन **जम-जुद-संजमिं**-यम से युक्त संयमी को **वंदे**-वंदन करता हूँ।

ऋषि

अणिमाइ-इड्ढि-जुत्तं, णियप्प-लीणं च सवर-कल्लाणं।
घोर-तवोधण णाणिं, जगे सुहदं रिसिं अच्चेमि।।111।।

अन्वयार्थ—अणिमाइ-इड्ढि-जुत्तं-अणिमा आदि ऋद्धि से युक्त **णियप्प-लीणं**-निज आत्म लीन **सवर-कल्लाणं**-स्वपर का कल्याण करने वाले **च**-और **घोर-तवोधण**-घोर तप को धारण करने वाले **णाणिं**-ज्ञानी **जगे**-संसार में **सुहदं**-सुख देने वाले **रिसिं**-ऋषि की **अच्चेमि**-अर्चना करता हूँ।

यति

ववसदि सिवं सेढीइ, आरूढदि खवगोवसामगो जो।
तं णियभवदाहगं हु, सु-पुरिसत्थिं जदिं पुज्जेमि।।112।।

अन्वयार्थ-जो-जो **सिवं**-मोक्ष का **ववसदि**-प्रयत्न करता है, **खवगो**-क्षपक व **उवसामगो**-उपशामक जो **सेढीइ**-श्रेणी पर **आरूढदि**-आरूढ़ होता है **तं**-उन **णियभवदाहगं**-अपने संसार को जलाने वाले **हु**-निश्चय से **सु-पुरिसत्थिं**-सम्यक् पुरुषार्थी **जदिं**-यति की **पुज्जेमि**-पूजा करता हूँ।

संन्यासी

ठवदि सदं णिय-चित्ते, चिंतदि झायदि बोल्लदि जो णिच्चं।
सण्णाणिं संलीणं, तं सण्णासिं णमामि सया।।113।।

अन्वयार्थ—जो-जो **णिच्चं**-नित्य **णिय-चित्ते**-निज चित्त में **सदं**-सत् की **ठवदि**-स्थापना करता है (सत् का) **चिंतदि**-चिंतन करता है **झायदि**-ध्यान करता है **बोल्लदि**-बोलता है **तं**-उन **सण्णाणिं**-सत् ज्ञानी **संलीणं**-सत् लीन व **सण्णासिं**-संन्यासी को **सया**-सदा **णमामि**-नमस्कार करता हूँ।

लोकपूज्य

आयरेदि मोणं जो, पच्चक्खणाणि-सुद्धप्पाणुभवी।
तं लोयपुज्जं मुणिं, सव्व-हिदकरं अच्चेमि सय।।114।

अन्वयार्थ—जो-जो **मोणं**-मौन का **आयरेदि**-आचरण करता है **पच्चक्खणाणी**-प्रत्यक्षज्ञानी **सुद्धप्पाणुभवी**-शुद्ध आत्मानुभवी है **तं**-उन **सव्व-हिदकरं**-सभी का हित करने वाले **लोयपुज्जं**-लोकपूज्य **मुणिं**-मुनि की **सय**-सदा **अच्चेमि**-अर्चना करता हूँ।

अनगार

अंतर-बहिं जो चयदि, आगाराइ-संगं णवकोडीइ।
तं अणयारं साहुं, सिद्ध-होदुं सक्कं थवेमि।।115।।

अन्वयार्थ—जो-जो **आगाराइ-संगं**-गृह आदि परिग्रह **अंतर-बहिं**-संपूर्ण अंतरंग-बहिरंग परिग्रह को **णवकोडीइ**-नव कोटि से **चयदि**-त्याग करता है **तं**-उन **सिद्ध-होदुं**-सिद्ध होने में **सक्कं**-समर्थ **अणयारं**-अनगार **साहुं**-साधु की **थवेमि**-मैं स्तुति करता हूँ।

श्रमण

कुव्वदि जो समं सया, सिद्धि-लहिदुं सव्व-कम्मक्खयिदुं।
सम-सम-भाव-जुदं तं, पणमामि भगवंतं समणं।।116।।

अन्वयार्थ—जो-जो **सया**-सदा **सिद्धि-लहिदुं**-सिद्धि के प्राप्त करने व **सव्व-कम्मक्खयिदुं**-सर्व कर्म क्षय के लिए **समं**-श्रम **कुव्वदि**-करते हैं **तं**-उन **सम-सम-भाव-जुदं**-समता व शम भावों से युक्त **समणं**-श्रमण **भगवंतं**-भगवंत को **पणमामि**-नमस्कार करता हूँ।

निर्ग्रन्थ

जो अंतर-बहिर-गंथि-रहिदो णिच्चं णिव्वियप्प-झाणी।
तं सुद्ध-गंथमूलं, सण्णाणि-णिग्गंथं वंदे।।117।।

अन्वयार्थ—जो-जो **णिच्चं** -नित्य **अंतर-बहिर-गंथि-रहिदो**-अंतरंग-बाह्य ग्रंथी से रहित हैं **णिव्वियप्प-झाणी**-निर्विकल्प ध्यानी हैं **तं**-उन **सुद्ध**-शुद्ध **सण्णाणि**-सम्यक्ज्ञानी **गंथमूलं**-शास्त्रों के मूल **णिग्गंथं**-निर्ग्रन्थ साधु की **वंदे**-वंदना करता हूँ।

स्नातक

सम-संतोस-जलेणं, सया पक्खालदि णिय-जीवणं जो।
संजम-झाणेण मणं, पमज्जदि तं णादगं थवमि।।118।।

अन्वयार्थ—जो-जो **सम-संतोस-जलेणं**-सम-संतोष जल से **सया**-सदा **णिय-जीवणं**-निज जीवन का **पक्खालदि**-प्रक्षालन करते हैं **संजम-झाणेण**-संयम व ध्यान से **मणं**-मन **पमज्जदि**-प्रमार्जित करते हैं **तं**-उन **णादगं**-स्नातक की **थवमि**-स्तुति करता हूँ।

धर्ममूर्ति

दह-दिसा जस्स वत्थं, णहोव्व णिव्वियारी अप्पदेहो।
रयणत्तयं सरीरं, दियंबरो धम्म-मुत्ती सो।।119।।

अन्वयार्थ—दह-दिसा-दस-दिशा **जस्स**-जिसके **वत्थं**-वस्त्र हैं **णहोव्व**-नभ के समान **णिव्वियारी**-निर्विकारी जिसकी **अप्पदेहो**-आत्मा रूपी देह है **रयणत्तयं**-रत्नत्रय जिसका **सरीरं**-शरीर है **सो**-वे **धम्म-मुत्ती**-धर्म मूर्ति **दियंबरो**-दिगंबर साधु हैं।

दिग्वासा

वासं वत्थं भणदे, सव्व-वसण मुज्झित्तु दिसा-वसणं।
गहदि वसदि अप्पदिसं, दिव्वासं तं झायेमि खलु।।120।।

अन्वयार्थ—वासं-वास **वत्थं**-वस्त्र को **भणदे**-कहते हैं जो **सव्व-वसणं**-जो सभी प्रकार के वस्त्रों का **उज्झित्तु**-त्यागकर **दिसा-वसणं**-दिशा रूपी वस्त्रों को **गहदि**-ग्रहण करते हैं **अप्पदिसं**-आत्मा रूपी दिशा में **वसदि**-वास करते हैं **तं**-उन **दिव्वासं**-दिग्वासा साधु का **खलु**-निश्चय से **झायेमि**-ध्यान करता हूँ।

हृषीकेश

हिसी इंदियं भणदे, ईसत्त-भावो हु फुट्टिदो जस्स।
अक्खजयि-हिसीकेसो, गुणपुंज-दोसवज्जिदो सो।।121।।

अन्वयार्थ—हिसी-हृषी **इंदियं**-इंद्रिय को **भणदे**-कहते हैं **जस्स**-जिसके **ईसत्त-भावो**-ईशत्व भाव **फुट्टिदो**-प्रकट हुआ है **सो**-वह **हु**-निश्चय से **अक्खजयी**-इंद्रिय जयी **गुणपुंजो**-गुणपुंज - **दोसवज्जिदो**-दोषवर्जित **हिसीकेसो**-हृषीकेश है।

दमी

चित्ते विज्जमाण-भव-देह-भोय-विसया दमंते जे हु।
दुट्ठ-भावाण दमगा, वंदे ता दमी तियालम्मि।।122।।

अन्वयार्थ—हु-निश्चय से **जे**-जो **चित्ते**-चित्त में **विज्जमाण-भव-देह-भोय-विसया**-विद्यमान संसार, शरीर, भोग-विषयों का **दमंते**-दमन करते हैं मैं **दुट्ठ-भावाण**-दुष्ट भावों के **दमगा**-दमन करने वाले **ता**-उन **दमी**-दमी साधुओं की **तियालम्मि**-तीनों काल में **वंदे**-वंदना करता हूँ।

भदंत

भद्दो सहजो सरलो, कसाय-समणो य संत-परिणामी।
विमलो जो जोगी तं, भदंतं णमामि भत्तीए।।123।।

अन्वयार्थ—जो-जो **जोगी**-योगी **भद्दो**-भद्र **सहजो**-सहज **सरलो**-सरल **कसाय-समणो**-कषायों का शमन करने वाले **संत-परिणामी**-शांत परिणामी **य**-और **विमलो**-विमल हैं **तं**-उन **भदंतं**-भदंत को **भत्तीए**-भक्ति से **णमामि**-नमस्कार करता हूँ।

वातरशना

पवणोव्व णिस्संगो य, अणुभवी हु सुद्ध-चेयणाए जो।
भुंजेदि समदा-रसं, वादरसणं णमंसामि तं।।124।।

अन्वयार्थ—जो-जो **पवणोव्व**-पवन के समान **णिस्संगो**-नि:संग है **सुद्ध-चेयणाए**-शुद्ध चेतना के **अणुभवी**-अनुभवी हैं **य**-व **हु**-निश्चय से **समदा-रसं**-समता रस का **भुंजेदि**-भोग करते हैं **तं**-उन **वादरसणं**-वातरसना साधु को **णमंसामि**-नमस्कार करता हूँ।

दांत

चित्त-सरीर-वयणाण, असुह-पविट्ठिं सया दमंते जे।
अप्प-अंत-संजुत्ता, णमो ताण दंत-साहूणं।।125।।

अन्वयार्थ—जे-जो **सया**-सदा **चित्त-सरीर-वयणाण**-चित्त, शरीर व वचनों की **असुह-पविट्ठिं**-अशुभ प्रवृति का **दमंते**-दमन करते हैं **अप्प-अंत-संजुत्ता**-आत्मा के अंत अर्थात् धर्म से संयुक्त हैं **ताण**-उन **दंत-साहूणं**-दांत साधुओं को **णमो**-नमस्कार हो।

मुंडक

पंचिंदियं तियोगं, करं पदं मुंडित्ता जो पच्छा।
बेड्डा-सिराण केसा, लुंचदि तं मुंडं पणमामि।।126।।

अन्वयार्थ—जो-जो **पंचिंदियं**-पंच इंद्रिय **तियोगं**-तीन योग **करं**-हाथ व **पदं**-पैर का **मुंडित्ता**-मुंडन करके **पच्छा**-पश्चात् **बेड्डा-सिराण**-दाढी, मूँछ व सिर के **केसा**-केशों का **लुंचदि**-लुंचन करते हैं **तं**-उन **मुंडं**-मुंड साधु को **पणमामि**-नमस्कार करता हूँ।

महात्मा

महो जस्स अप्पा खलु, रयणत्तयेण जुदो महप्पा सो।
सव्व-हिदस्स कारणं, महप्प-चरणंबुजं णमामि।।127।।

अन्वयार्थ—खलु-निश्चय से **जस्स**-जिसकी **अप्पा**-आत्मा **महो**-महान् है **रयणत्तयेण**-रत्नत्रय से **जुदो**-युक्त है **सो**-वह **महप्पा**-महात्मा है **सव्व-हिदस्स**-सबके हित के **कारणं**-कारण **महप्प-चरणंबुजं**-महात्मा के चरण कमल में **णमामि**-नमस्कार करता हूँ।

अचेलक

ण किंचिवि धरदि चेलं णत्थि जो मोहादि-अण्ण-संगं वि।
तं अचेलगं वंदे, परिहरिदुं सया भव-भमणं।।128।।

अन्वयार्थ—जो-जो **किंचिवि**-किंचित् भी **चेलं**-वस्त्र **ण धरदि**-धारण नहीं करते **मोहादि-अण्ण-संगं**-मोह आदि अन्य परिग्रह **वि**-भी **णत्थि**-धारण नहीं करते **भव-भमणं**-संसार के भ्रमण के **परिहरिदुं**-परिहार के लिए **तं**-उन **अचेलगं**-अचेलक साधु की **सया**-सदा **वंदे**-वंदना करता हूँ।

महंत

अप्पधम्म-महधम्मो महंतो धारगो तस्स धम्मस्स।
तिभत्तीइ वंदे तं, सग-भव-महण्णव-सोसेदुं।।129।।

अन्वयार्थ—अप्पधम्मो-आत्म धर्म **महधम्मो**-महाधर्म है **तस्स**-उस **धम्मस्स**-धर्म के **धारगो**-धारक **महंतो**-महंत हैं **सग-भव-महण्णव-सोसेदुं**-अपने संसार रूपी महा सागर के शोषण के लिए **तं**-उन (महंत की) **तिभत्तीइ**-त्रिभक्ति से **वंदे**-वंदना करता हूँ।

साधक

णिअमदि जोग-पविट्ठिं, पयोजण मप्प-गुणाण साहदि जो।
स-विसम-परिट्ठिदीइ वि, अचलो तं साहगं णमामि।।130।।

अन्वयार्थ—जो-जो **जोग-पविट्ठिं**-तीनों योगों की प्रवृत्ति **णिअमदि**-नियंत्रित करता है **अप्प-गुणाण**-आत्म-गुणों का **पयोजणं**-प्रयोजन **साहदि**-सिद्ध करता है **स-विसम-परिट्ठिदीइ**-अपनी विषम परिस्थिति में **वि**-भी **अचलो**-अचल है **तं**-उन **साहगं**-साधक को **णमामि**-नमस्कार करता हूँ।

जिन

मोहाइं जयित्तु जो, सम्मत्ताइ-सगप्पगुणा लहदे।
मोक्ख-पह-णायगं तं, भवकाणण-जयिं जिणं थवमि।।131।।

अन्वयार्थ—जो-जो **मोहाइं**-मोह आदि **जयित्तु**-जीतकर **सम्मत्ताइ-सगप्पगुणा**-सम्यक्त्व आदि निज आत्म गुण **लहदे**-प्राप्त करते हैं **तं**-उन **मोक्ख-पह-णायगं**-मोक्ष पथ के नायक **भवकाणण-जयिं**-संसार वन को जीतने वाले **जिणं**-जिन की **थवमि**-स्तुति करता हूँ।

संत

जे सम्मत्ताइ-धम्म-समत्ताइ-सहजभाव-संजुत्ता।
अहिंसा-पालगा ते, संता भव-समेदुं वंदे।।132।।

अन्वयार्थ—जे-जो **सम्मत्ताइ-धम्म-समत्ताइ-सहजभाव-संजुत्ता**-सम्यक्त्व आदि धर्म, समत्व आदि सहज भाव से संयुक्त हैं **अहिंसा-पालगा**-अहिंसा का पालन करने वाले हैं **ते**-उन **संता**-संतों की **भव-समेदुं**-संसार के नाश के लिए मैं **वंदे**-वंदना करता हूँ।

जितेन्द्रिय

फासाइ-पंचिंदियं, अप्पसिद्धीइ जिदं जेहि मुणीहि।
जितेंदियं णमामि तं, सिव-लहिदुं जितेंदिय-सक्को।।133।।

अन्वयार्थ—जेहि-जिन **मुणीहि**-मुनियों के द्वारा **अप्पसिद्धीइ**-आत्म सिद्धि के लिए **फासाइ-पंचिंदियं**-स्पर्श आदि पंचेन्द्रिय **जिदं**-जीती गई **तं**-उन **जितेंदियं**-जितेन्द्रिय को **णमामि**-नमस्कार करता हूँ **जितेंदियो**-जितेन्द्रिय ही **सिव-लहिदुं**-मोक्ष प्राप्त करने में **सक्को**-समर्थ है।

क्षपक

रदो मोहादि-खयिदुं, तह जो अणसणाइ-तव-संजुत्तो।
खवगं दियंबरं तं, पुज्जेमि सग-कम्मक्खयिदुं।।134।।

अन्वयार्थ—जो-जो **मोहादि-खयिदुं**-मोह आदि क्षय करने में **रदो**-रत है **तह**-तथा **अणसणाइ-तव-संजुत्तो**-अनशन आदि तप से संयुक्त है **तं**-उन **खवगं**-क्षपक **दियंबरं**-दिगंबर साधु की **सग-कम्मक्खयिदुं**-अपने कर्म के क्षय के लिए **पुज्जेमि**-पूजा करता हूँ।

उपशामक

अडवीस-मोहपयडी, जो उवसमदि उवसामग-जदिं तं।
संतीइ सग-मोहस्स, पणमामि णिय-सहाव-लहिदुं।।135।।

अन्वयार्थ—जो-जो **अडवीस-मोहपयडी**-मोह की अट्ठाईस प्रकृतियों का **उवसमदि**-उपशमन करते हैं **तं**-उन **उवसामग-जदिं**-उपशामक यति को **सग-मोहस्स**-अपने मोह की **संतीइ**-शांति के लिए **णिय-सहाव-लहिदुं**-निज स्वभाव की प्राप्ति के लिए **पणमामि**-प्रणाम करता हूँ।

आचेलक्य का हेतु

आचेलक्कं मण्णे, णिच्चं देहाइ-आरोग्ग-हेदू।
चित्तस्स सुह-संतीण, साहणाइ अप्पविसुद्धीइ।।136।।

अन्वयार्थ—आचेलक्कं-आचेलक्य **णिच्चं**-नित्य **चित्तस्स**-चित्त की **सुह-संतीण**-सुख-शान्ति **साहणाइ**-साधना **अप्पविसुद्धीइ**-आत्म विशुद्धि व **देहाइ-आरोग्ग-हेदू**-देह आदि के आरोग्य का कारण **मण्णे**-माना जाता है।

दिगंबर प्रकृति

जा पयडी दियंबरो, णंद-कारणं दियंबरो तम्हा।
वियडी सव्व-रोयाण, मण्णे बहुदुक्ख-कारणं च।।137।।

अन्वयार्थ—जा-क्योंकि **पयडी**-प्रकृति **दियंबरो**-दिगंबर है **तम्हा**-इसीलिए **दियंबरो**-दिगंबर साधु **णंद-कारणं**-आनंद का कारण हैं **वियडी**-विकृति **सव्व-रोयाण**-सभी रोगों **च**-और **बहुदुक्ख-कारणं**-बहुत दु:खों का कारण **मण्णे**-मानी जाती है।

सहज प्राकृतिक दिगंबर रूप

दियंबर-सहजरूवो, सहजरूवो खलु मण्णदे पयडी।
णिच्चं सस्सद-हेदू, सहजावत्था आणंदस्स।।138।।

अन्वयार्थ—दियंबरो-दिगंबर रूप **सहजरूवो**-सहज रूप है **सहजरूवो**-सहज रूप **खलु**-निश्चय से **पयडी**-प्रकृति **मण्णदे**-मानी जाती है **सहजावत्था**-सहज अवस्था **णिच्चं**-नित्य **आणंदस्स**-आनंद की **सस्सद-हेदू**-शाश्वत हेतु है।

सदा अभूतपूर्व

साहू ण भूदपुव्वो, होज्जा जम्हा अभूदपुव्वो सो।
तस्स साहुत्त-गुणो ण, कया वि खयदि कस्स वि याले।।139।।

अन्वयार्थ—साहू-साधु **भूदपुव्वो**-भूतपूर्व **ण**-नहीं होता **जम्हा**-क्योंकि **सो**-वह **अभूदपुव्वो**-अभूतपूर्व **होज्जा**-होता है **तस्स**-उसका **साहुत्त-गुणो**-साधुत्व गुण **कया वि**-कभी भी **कस्स वि याले**किसी भी काल में **ण खयदि**-नष्ट नहीं होता।

नव-नव उत्साह

रुक्खो चयदि पत्ताणि, णवीण-पल्लवा णंतरं लहदे।
णविअ-पइडि-रूवो खलु, कारणं बलुच्छाह-सुहाण।।140।।

अन्वयार्थ—रुक्खो-वृक्ष (स्वयं) **पत्ताणि**-पत्तों को **चयदि**-त्यागता है **अणंतरं**-इसके अनंतर **णवीण-पल्लवा**-नवीन पल्लवों को **लहदे**-प्राप्त करता है **णविअ-पइडि-रूवो**-प्रकृति का नया रूप **खलु**-निश्चय से **बल-उच्छाह-सुहाण**-उत्साह, बल और सुख का **कारणं**-कारण है।

भवकारण

धण-मलाण-संगहो य, पाव-रोयाणं कारणं कमसो।
कमसो सुगदि-भवाणं, संगहो पुण्ण-पावाण तह।।141।।

अन्वयार्थ—धण-मलाण-धन व मल का **संगहो**-संग्रह **कमसो**-क्रमश: **पाव-रोयाणं**-पाप व रोगों का **कारणं**-कारण **मण्णे**-माना जाता है **पुण्ण-पावाण**-पुण्य और पाप कर्मों का **संगहो**-संग्रह **कमसो**-क्रम से **सुगदि-भवाणं**-सुगति व संसार का कारण माना जाता है।

ममत्व निवारक

केसलोओ देहादु, ममत्त-णिवारण-कारणं मण्णे।
ममत्तं दुक्ख-बीअं, संसार-रुक्खस्स मूलं च।।142।।

अन्वयार्थ—केसलोओ-केशलोंच **देहादु**-देह से **ममत्त-णिवारण-कारणं**-ममत्व के निवारण का कारण **मण्णे**-माना जाता है **ममत्तं**-ममत्व **दुक्ख-बीअं**-दु:ख का बीज है **च**-और **संसार-रुक्खस्स**-संसार रूपी वृक्ष का **मूलं**-मूल है।

पद विहार

सव्वाण पद-विहारो, आरोग्ग-सुहस्स कारणं णिच्चं।
अवि वायामो मण्णे, वायामो सत्ति-वड्ढगो य।।143।।

अन्वयार्थ—पद-विहारो-पद विहार **सव्वाण**-सभी के लिए **णिच्चं**-नित्य **आरोग्ग-सुहस्स**-आरोग्य सुख का **कारणं**-कारण है (यह) **वायामो**-व्यायाम **अवि**-भी **मण्णे**-माना जाता है **य**-और **वायामो**-व्यायाम **सत्ति-वड्ढगो**-शक्ति वर्द्धक है।

व्यायाम

वायामेण वड्ढदे, बलं कंती उच्छाह-सुह-संती।
सयायारो य धम्मो, करिज्जदि सो जदि विवेगेण।।144।।

अन्वयार्थ—वायामेण-व्यायाम से **बलं**-बल **कंती**-कांति **उच्छाह-सुह-संती**-उत्साह, सुख-शांति **सयायारो**-सदाचार **य**-और **धम्मो**-धर्म **वड्ढदे**-वृद्धिंगत होता है **जदि**-यदि **सो**-वह **विवेगेण**-विवेक **करिज्जदि**-किया जाता है तो।

पद विहार के वैज्ञानिक कारण

पज्जावरण-सुद्धीइ, उवयारी पद-विहारो विमण्णे।
गहंते पद-विहारी, सुद्ध-वग्गणा हु भूमीए।।145।।

अन्वयार्थ—पज्जावरण-सुद्धीइ-पर्यावरण की शुद्धि के लिए **पद-विहारो**-पद विहार **उवयारी**-उपकारी **विमण्णे**-माना जाता है **पद-विहारी**-पैदल चलने वाले **हु**-निश्चय से **भूमीए**-भूमि से **सुद्ध वग्गणा**-शुद्ध वर्गणा **गहंते**-ग्रहण करते हैं।

पदविहार क्यों ?

सव्वदा पद-विहारो, सवरचित्ते वड्ढदि दयाभावं।
असंग-वदं पालिदुं, जीव-रक्खेदुं होदि तहा।।146।।

अन्वयार्थ—पद-विहारो-पद विहार **सवर-चित्ते**-स्व-पर चित्त में **दयाभावं**-दयाभाव **वड्ढदि**-वृद्धिंगत करता है (यह) **सव्वदा**-सर्वदा **असंग-वदं**-अपरिग्रह व्रत **पालिदुं**-पालन **तहा**-तथा **जीव-रक्खेदुं**-जीणे की रक्षा के लिए **होदि**-होता है।

स्थित प्रज्ञ

दियंबरो ठिदि-पण्णो, कोह-कामाइ-विवज्जिदो साहू।
तच्च-णाण-संपण्णो, अविचलो सुद्धप्प-झाणम्मि।।147।।

अन्वयार्थ—कोह-कामाइ-विवज्जिदो-क्रोध, काम आदि से विवर्जित **तच्च-णाण-संपण्णो**-तत्त्व ज्ञान से संपन्न **सुद्धप्प-झाणम्मि**-शुद्ध आत्म ज्ञान में **अविचलो**-अविचल **दियंबरो**-दिगंबर **साहू**-साधु **ठिदि-पण्णो**-स्थिति प्रज्ञ है।

सुख-आनंद-समृद्धि

विज्जंति जत्थ खेत्ते, दियंबर तवोधणा मुणी साहू।
णियमेण तत्थ खेत्ते, वट्टदि आणंद-सुह-संती।।148।।

अन्वयार्थ—जत्थ-जिस **खेत्ते**-क्षेत्र में **तवोधणा**-तपोधन **दियंबरा**-दिगंबर **मुणी**-मुनि **साहू**-साधु **विज्जंति**-विद्यमान हैं **तत्थ-खेत्ते** क्षेत्र में **णियमेण**-नियम से **आणंद-सुह-संती**-आनंद, सुख, शांति **वट्टदि**-वर्तन करती है।

दु:खाभाव

णायो सासगो जत्थ, पोम्मिणी दियंबरो रायहंसो।
गिही तच्चणाणि-वदी, विज्जंते कहं दुहं तत्थ।।149।।

अन्वयार्थ—जत्थ-जहाँ **णायो**-न्याय-युक्त **सासगो**-शासक **पोम्मिणी**-पद्मिनी स्त्री **रायहंसो**-राजहंस **तच्चणाणि-वदी**-तत्त्वज्ञानी, व्रती **गिही**-गृहस्थ और **दियंबरो**-दिगंबर साधु **विज्जंते**-विद्यमान हैं **तत्थ**-वहाँ **दुहं**-दु:ख **कहं**-कैसे हो सकता है? अर्थात् नहीं हो सकता।

प्राकृतिक प्रकोप भी नहीं

भूकंप-महामारी, उक्कावायो तह विज्जुद-पडणं।
झंझादी णहि तस्सिं, होज्ज पुण्ण-अहिंसा जस्सिं।।150।।

अन्वयार्थ—जस्सिं-जहाँ **पुण्ण-अहिंसा**-पूर्ण अहिंसा **होज्ज**-होती है **तस्सिं**-वहाँ **भूकंपो**-भूकंप **महामारी**-महामारी **उक्कावायो**-उल्कापात **विज्जुद-पडणं**-बिजली गिरना **तह**-तथा **झंझादी**-आँधी तूफान **णहि**-नहीं होते।

सुविधा-दुविधा कारक

भोदिगुवयरणादु जो, विरदो णिद्दोस-साहणं करिदुं।
लहदि सो णिच्च-णंदं, सुविहा सया दुविहा-हेदू।।151।।

अन्वयार्थ—जो-जो **णिद्दोस-साहणं**-निर्दोष साधना **करिदुं**-करने के लिए **भोदिग- उवयरणादु**-भौतिक उपकरणों से **विरदो**-विरक्त है **सो**-वह **णिच्च-णंदं**-नित्य आनंद को **लहदि**-प्राप्त करता है (क्योंकि) **सुविहा**-सुविधा **सया**-सदा **दुविहा-हेदू**-दुविधा का हेतु है।

परिग्रह से अशांति

माणव-जीवणम्मि खलु, जावइअ जावइअ वड्ढदि संगो।
तावइअ तावइअ दुह-असंती संखडं पावं च।।152।।

अन्वयार्थ—माणव-जीवणम्मि-मानव के जीवन में **जावइअ जावइअ**-जितना-जितना **संगो**-परिग्रह **वड्ढदि**-बढ़ता है **खलु**-निश्चय से **तावइअ तावइअ**-उतना-उतना **दुह-असंती**-दुःख, अशांति **संखडं**-कलह **च**-और **पावं**-पाप बढ़ता है।

अनंत दुःखी कौन ?

ण विज्जदि जस्स चित्ते, जिणो सुगुरू सुधम्मो जिणवयणं।
सो सम्मत्त-विहीणो, लहदे अणंत-दुहाणि चिरं।।153।।

अन्वयार्थ—जस्स-जिसके **चित्ते**-चित्ते में **जिणो**-जिनदेव **सुगुरू**-सुगुरु **सुधम्मो**-धर्म **जिणवयणं**-जिनवचन **विज्जदि**-विद्यमान **ण**-नहीं है **सो**-वह **सम्मत्त-विहीणो**-सम्यक्त्व विहीन नर **चिरं**-चिरकाल तक **अणंत-दुहाणि**-अनंत दुःखों को **लहदे**-प्राप्त करता है।

सम्यक् शास्त्र

दीव-अक्क-चंदेहिं, विणा ण सक्को पयासो ताण जह।
सुसत्थेणं विणा तह, सण्णाण-लहणं संभवो ण।।154।।

अन्वयार्थ—जह-जिस प्रकार **दीव-अक्क-चंदेहिं**-दीपक, सूर्य व चंद्रमा के **विणा**-बिना **ताण**-उनका **पयासो**-प्रकाश **सक्को**-शक्य **ण**-नहीं है **तह**-उसी प्रकार **सुसत्थेणं**-सम्यक् शास्त्र के **विणा**-बिना **सण्णाण-लहणं**-सम्यक् ज्ञान प्राप्त करना **ण संभवो**-संभव नहीं है।

आत्मा का भोजन

पिवासियो जह जलेण, थिंपदि खलु भुक्खिओ भोयणेणं।
अग्गी इंधणेणं च, तहा अप्पा सण्णाणेणं।।155।।

अन्वयार्थ—जह-जिस प्रकार **पिवासियो**-प्यासा व्यक्ति **जलेण**-जल से, **भुक्खिओ**-भूखा **भोयणेण**-भोजन से **च**-और **अग्गी**-अग्नि **इंधणेणं**-ईंधन से **थिंपदि**-संतुष्ट होती है **तह**-उसी प्रकार **अप्पा**-आत्मा **खलु**-निश्चय से **सण्णाणेणं**-सम्यग्ज्ञान से संतुष्ट होती है।

सम्यग्ज्ञान का कारण

सायरं विणा रयणं, आणापाणेण विणा जीवणं ण।
धम्मो विणा अहिंसं, सुसत्थं विणा ण सण्णाणं।।156।।

अन्वयार्थ—जैसे **सायरं**-सागर के **विणा**-बिना **रयणं**-रत्न **आणापाणेण**-श्वासोच्छ्वास को **विणा**-बिना **जीवणं**-जीवन व **अहिंसं**-अहिंसा के **विणा**-बिना **धम्मो**-धर्म **ण**-नहीं होता (वैसे) **सुसत्थं**-सम्यक् शास्त्र के **विणा**-बिना **सण्णाणं**-सम्यक् ज्ञान **ण**-नहीं होता।

साधु बिना धर्म नहीं

मुत्तिअं विणा सिप्पिं, धेणुं विणा गोघिदं जह कया वि।
धम्मो साहुं विणा ण, धम्मी णो तह विणा धम्मं।।157।।

अन्वयार्थ—**जह**-जिस प्रकार **सिप्पिं**-सीप के **विणा**-बिना **मुत्तिअं**-मोती **धेणुं**-गाय के **विणा**-बिना **गोघिदं**-गौघृत व **साहुं**-साधु के **विणा**-बिना **धम्मी**-धर्म **ण**-नहीं होता **तह**-उसी प्रकार **धम्मं**-धर्म के **विणा**-बिना **धम्मी**-धर्मी **कया वि**-कदापि **णो**-नहीं होता।

ग्रंथकार की लघुता

पमाद-अप्पणाणेहि, विसुईए सण्णाणस्स कयाई।
विज्जदि किंचिवि दोसो, सुजणो गहदु गुणा हंसोव्व।।158।।

अन्वयार्थ—**पमाद-अप्पणाणेहि**-प्रमाद से, अल्पज्ञान से वा **कयाई**-कदाचित् **सण्णाणस्स**-सम्यक्ज्ञान की **विसुईए**-विस्मृति से यदि **किंचिवि**-किंचित् भी **दोसो**-दोष **विज्जदि**-विद्यमान हो तो **सुजणो**-सज्जन **हंसोव्व**-हंस के समान **गुणा**-गुणों को **गहदु**-ग्रहण करे।

णाण-गदि-समिदि-गंधे, वीरद्धम्मि पुण्णं इणं सत्थं।
विस्स-पुज्ज-दियंबरं, गुरु-कर-अंबुजं समप्पेमि।।

अन्वयार्थ—णाण-गदि-समिदि-गंधे-ज्ञान (5) गति (4) व्रत (5), गंध (2) 54 52 किंतु 'अंकानां वामतो गतिः' से **वीरद्धम्मि**-2545 वीर निर्वाण संवत् में **इणं**-यह **सत्थं**-शास्त्र **पुण्णं**-पूर्ण हुआ (इस) **विस्स-पुज्ज-दियंबरं**-विश्व पूज्य दिगंबर (नामक ग्रंथ को) **गुरु-कर-अंबुजेसु**-गुरु के कर कमलों में **समप्पेमि**-समर्पित करता हूँ।

अंतिम मंगलाचरण

गद-रायी सव्वण्हू, दव्व-भाव-णोकम्म-विहीणा तह।
पणमामि सव्व-सिद्धा, कम्मक्खयिदुं-मप्पसिद्धीइ।।159।।

अन्वयार्थ—गदरायी-गतरागी, **सव्वण्हू**-सर्वज्ञ **दव्व-भाव-णोकम्म-विहीणा तह**-द्रव्य, भाव तथा नोकर्म से विहीन **सव्व-सिद्धा**-सभी सिद्धों को **कम्मक्खयिदुं**-कर्म क्षय व **अप्पसिद्धीइ**-आत्म सिद्धि के लिए **पणमामि**-नमस्कार करता हूँ।

सयल-परमप्पाणं हि, आइरियाणं उवज्झायाणं च।
दियंबराण साहूण, णमो णमो सया तियालम्मि।।160।।

अन्वयार्थ—सयल-परमप्पाणं-सकल परमात्मा **आइरियाणं**-आचार्य **उवज्झायाणं**-उपाध्याय **च**-और **दियंबराण साहूण**-दिगंबर साधुओं को **सया**-सदा **हि**-ही **तियालम्मि**-तीनों काल में **णमो**-नमस्कार हो **णमो**-नमस्कार हो।

सिरि-चरिय-चक्कि-संतिं, सायरं महातवसि-पायसिंधुं।
अज्झप्पिअ-जयकित्तिं, देस-गोरव-देसभूसणं।।161।।

रट्ठ-संत-महजोगिं, जुग-पुरिसं सया सिद्धंत-चक्किं।
मम गुरु-विज्जाणंदं, सूरिं णमामि तिभत्तीए।।162।।

अन्वयार्थ—चरिय-चक्किं-चरित्र चक्रवर्ती **सूरिं**-आचार्य **सिरिं**-श्री **संतिं सायरं**-शांति सागर **महातवसि-पायसिंधुं**-महातपस्वी आचार्य श्री पायसागर **अज्झप्पिअ-जयकित्तिं**-आध्यात्मिक योगी आचार्य श्री जयकीर्ति जी **देस-गोरव-देसभूसणं**-देश गौरव आचार्य श्री देशभूषण जी **रट्ठ-संत-महजोगिं**-राष्ट्र संत महायोगी **जुग-पुरिसं**-युग पुरुष **सिद्धंत-चक्किं**-सिद्धांत चक्रवर्ती **मम**-मेरे **गुरु**-गुरु **विज्जाणंदं**-आचार्य श्री विद्यानंद जी को **सया**-सदा **तिभत्तीए**-त्रिभक्ति से **णमामि**-नमस्कार करता हूँ।

प्रशस्ति

पसंगम्मि सड-उत्तर-पण्णास-मुणि-दिक्खा-जयंतीए।
पण-णवदि-जम्मदिवसे, सेट्ठ-सूरि-विज्जाणंदस्स।।163।

सव्व-सामण्ण-जणाण, तच्च-बोहत्थं अप्प-सेयत्थं।
इमो विरइदो गंथो, सवर-हिदत्थ-मुहय-सुहत्थं।।164।।

अन्वयार्थ—सेट्ठ-सूरि-विज्जाणंदस्स-श्रेष्ठ आचार्य श्री विद्यानंद जी मुनिराज के **सड-उत्तर-पण्णास-मुणि-दिक्खा-जयंतीए**-56वें मुनि दीक्षा जयंती के **पसंगम्मि**-प्रसंग पर **पण-णवदी-जम्मदिवसे**-95वें जन्म दिवस पर **सव्व-सामण्ण-जणाण**-सर्व सामान्य जनों के **तच्च-बोहत्थं**-तत्त्व बोध **अप्प-सेयत्थं**-आत्म कल्याण **सवर-हिदत्थं**-स्वपर-हित व **उहय-सुहत्थं**-उभय सुख के लिए **इमो**-यह **गंथो**-ग्रंथ **विरइदो**-रचा गया।